3 विज्ञान भैरव तंत्र—

तंत्र सूत्र--विधि -48
काम संबंधि पहला सूत्र--
‘’काम-आलिंगन में आरंभ में उसकी आरंभिक अग्नि पर अवधान दो, और ऐसा करते
हुए अंत में उसके अंगारे से बचो।‘’

कई कारणों से काम कृत्य गहन परितृप्ति बन सकता है और वह तुम्हें तुम्हारी अखंडता पर, स्वभाविक और प्रामाणिक जीवन पर वापस पहुंचा सकता है। उन कारणों को समझना होगा। एक कारण यह है कि काम कृत्य समग्र कृत्य है। इसमें तुम अपने मन से बिलकुल
अलग हो जाते हो। छूट जाते हो। यही कारण है कि कामवासना से इतना डर लगता है। तुम्हारा तादात्म्य मन के साथ है और काम अ-मन का कृत्य है। उस कृत्य में उतरते ही तुम बुद्धि-विहीन हो जाते हो। उसमे बुद्धि काम नहीं करती। उसमे तर्क की जगह नहीं है। कोई मानसिक प्रक्रिया नहीं है। और अगर मानसिक प्रक्रिया चलती है तो काम कृत्य सच्चा और प्रामाणिक नहीं हो सकता। तब आर्गाज्म संभव नहीं है। गहन परितृप्ति संभव नहीं है। तब काम-कृत्य उथला हो जाता है। मानसिक कृत्य हो जाता है। ऐसा ही हो गया है। सारी दुनिया में कामवासना की इतनी दौड़ है, काम की इतनी खोज है, उसका कारण
यह नहीं है कि दुनिया ज्यादा कामुक हो गई है। उसका कारण इतना ही हे कि तुम काम-कृत्य को उसकी समग्रता में नहीं भोग पाते हो। इसीलिए कामवासना की इतनी दौड़ है। यह दौड़ बताती है कि सच्चा काम खो गया है। और उसकी जगह नकली काम हावी हो गया है। सारा आधुनिक चित कामुक हो गया है। क्योंकि काम कृत्य ही खो गया है। काम कृत्य भी मानसिक कृत्य बन गया है। काम मन में चलता रहता है और तुम उसके संबंध में सोचते रहते हो। मेरे पास अनेक लोग आते है और कहते है कि हम काम के संबंध में सोच-विचार करते है, पढ़ते है, चित्र देखते है। अश्लील चित्र देखते है। वही उनका कामानंद है, सेक्स का शिखर अनुभव है। लेकिन जब काम का असली क्षण आता है तो उन्हें अचानक पता चलता है कि उसमे उनकी रूचि नहीं है। यहां तक कि वे उसमे अपने को नापुंसग अनुभव करते है। सोच-विचार के क्षण में ही उन्हें काम उर्जा का एहसास होता है। लेकिन जब वे कृत्य में उतरना चाहते है तो उन्हें पता चलता है कि उसके लिए उनके पास ऊर्जा नहीं है। तब उन्हें कामवासना का भी पता नहीं चलता है। उन्हें लगता है कि उनका शरीर मुर्दा हो गया है।
उन्हें क्या हो गया है?यही हो रहा है कि उनका काम-कृत्य भी मानसिक हो गया
है। वे इसके बारे में सिर्फ सोच विचार कर सकते है। वे कुछ कर नहीं सकते। क् योंकि कृत्य में तो पूरे का पूरा जाना पड़ता है। और जब भी पूरे होकर कृत्य में संलग्न होने की बात उठती है। मन बेचैन हो जाता है। क्योंकि तब मन मालिक नहीं रह सकता, तब मन नियंत्रण नहीं कर सकता। तंत्र काम-कृत्य को, संभोग को तुम्हें अखंड बनाने के लिए उपयोग में लाता
है। लेकिन तब तुम्हें इसमे बहुत ध्यानपूर्वक उतरना होगा। तब तुम्हें काम के संबंध में वह सब भूल जाना होगा जो तुमने सुना है, पढ़ा है, जो समाज ने, संगठित धर्मों ने, धर्म गुरूओं ने तुम्हें सिखाया है। सब कुछ भूल जाओ। दिया है। और समग्रता से इसमे उतरो। भूल जाओ कि नियंत्रण करना है। नियंत्रण ही बाधा है। उचित है कि तुम उस पर नियंत्रण करने की बजाय अपने को उसके हाथों में छोड़ दो। तुम ही उसके बस में हो जाओ। संभोग में पागल की तरह जाओ। अ-मन की अवस्था पागलपन जैसी मालूम पड़ती है। शरीर ही बन जाओ। पशु ही बन जाओ। क्योंकि पशु पूर्ण है।
जैसा आधुनिक मनुष्य है। उसे पूर्ण बनाने की सबसे सरल संभावना केवल काम

में है। सेक्स में है, क्योंकि काम तुम्हारे भीतर गहन जैविक केंद्र है। तुम उससे ही उत्पन्न हुए हो। तुम्हारी प्रत्येक कोशिका काम-कोशिका है। तुम्हारा समस्त शरीर काम-उर्जा की घटना है। यह पहला सूत्र कहता है: ‘’काम-आलिंगन के आरंभ में उसकी आरंभिक अग्नि पर अवधान दो, और ऐसा करते हुए अंत में उसके अंगारे से बचो।‘’ इसी में सारा फर्क है, सारा भेद है। तुम्हारे काम-कृत्य, संभोग महज राहत
का, अपने को तनाव-मुक्त करने का उपाय है। इसलिए जब तुम संभोग में उतरते हो तो तुम्हें बहुत जल्दी रहती है। तुम किसी तरह छुटकारा चाहते हो। छुटकारा यह कि जो ऊर्जा का अतिरेक तुम्हें पीडित किए है वि निकल जाए और तुम चैन अनुभव करो। लेकिन यह चैन एक तरह की दुर्बलता है। ऊर्जा की अधिकता तनाव पैदा करती है। उतैजना पैदा करती है। और तुम्हें लगता है कि उसे फेंकना जरूरी है। जब वह ऊर्जा बह जाती है तो तुम कमजोरी अनुभव करते हो। और तुम उसी कमजोरी को विश्राम मान लेते हो। क्योंकि ऊर्जा की बाढ़ समाप्त हो गई उतैजना जाती रही, इसलिए तुम्हें विश्राम मालूम पड़ता है।
लेकिन यह विश्राम नकारात्मक विश्राम है। अगर सिर्फ ऊर्जा को बाहर फेंककर तुम विश्राम प्राप्त करते हो तो यह विश्राम बहुत महंगा है। और तो भी यह सिर्फ शारीरिक विश्राम होगा। वह गहरा नहीं होगा। वह आध्यात्मिक नहीं होगा।

यह पहला सूत्र कहता है कि जल्द बाजी मत करो और अंत के लिए उतावले मत
बनो, आरंभ में बने रहो। काम-कृत्य के दो भाग है: आरंभ और अंत। तुम आरंभ के साथ रहो। आरंभ का भाग ज्यादा विश्राम पूर्ण है। ज्यादा उष्ण है। लेकिन अंत पर पहुंचने की
जल्दी मत करो। अंत को बिलकुल भूल जाओ।

तीन संभावनाएं है। दो प्रेमी प्रेम में तीन आकार, ज्यामितिक आकार निर्मित
कर सकते है। शायद तुमने इसके बारे में पढ़ा भी होगा। या कोई पुरानी कीमिया, की तस्वीर
भी देखो। जिसमें एक स्त्री और एक पुरूष तीन ज्यामितिक आकारों में नग्न खड़े है। एक
आकार चतुर्भुज है, दूसरा त्रिभुज है, और तीसरा वर्तुल है। यक अल्केमी और तंत्र की भाषा में
काम क्रोध का बहुत पुराना विश्लेषण है।

आमतौर से जब तुम संभोग में होते हो तो वहां दो नहीं, चार व्यक्ति होते है।
वही है चतुर्भुज। उसमे चार कोने है, क्योंकि तुम दो हिस्सों में बंटे हो। तुम् हारा एक हिस्सा
विचार करने वाला है और दूसरा हिस्सा भावुक हिस्सा है। वैसे ही तुम्हारा साथी भी दो हिस्सों
में बंटा है। तुम चार व्यक्ति हो दो नहीं। चार व्यक्ति प्रेम कर रहे है। यह एक भीड़ है, और
इसमें वस्तुत: प्रगाढ़ मिलन की संभावना नहीं है। इस मिलन के चार कोने है और मिलन
झूठा है। वह मिलन जैसा मालूम होता है। लेकिन मिलन है नहीं। इसमें प्रगाढ़ मिलन की
कोई संभावना नहीं है। क्योंकि तुम्हारा गहन भाग दबा पडा है। केवल दो सिर, दो विचार की
प्रक्रियाएं मिल रही है। भाव की प्रक्रियाएं अनुपस्थित है। वे दबी छीपी है।

दूसरी कोटी काम मिलन त्रिभुज जैसा होगा। तुम दो हो, आधार के कोने और

किसी क्षण अचानक तुम दोनों एक हो जाते हो—त्रिभुज के तीसरे कोने की तरह। किसी आकस्मिक क्षण में तुम्हारी दुई मिट जाती है। और तुम एक हो जाते है। यह मिलन चतुर्भुजी
मिलन से बेहतर है। क्योंकि कम से कम एक क्षण के लिए ही सही, एकता सध जाती है। वह एकता तुम्हें स्वास्थ्य देती है। शक्ति देती है। तुम फिर युवा और जीवंत अनुभव करते
हो।

लेकिन तीसरा मिलन सर्वश्रेष्ठ है। और यह तांत्रिक मिलन है। इसमें तुम एक वर्तुल हो जाते हो, इसमें कोने नहीं रहते। और यह मिलन क्षण भर के लिए नहीं है, वस्तुत:
यह मिलन समयातित है। उसमें समय नहीं रहता। और यह मिलन तभी संभव है जब तुम स्खलन नहीं खोजते हो। अगर स्खलन खोजते हो तो फिर यह त्रिभुजीय मिलन हो जाएगा। क्योंकि स्खलन होते ही संपर्क का बिंदु मिलन का बिंदू खो जाता है।

आरंभ के साथ रहो, अंत की फिक्र मत करो। इस आरंभ में कैसे रहा जाए? इस संबंध में बहुत सी बातें ख्याल में लेने जैसी है। पहली बात कि काम कृत्य को कहीं जाने का, पहुंचने
का माध्यम मत बनाओ। संभोग को साधन की तरह मत लो, वह आपने आप में साध्य है।
उसका कहीं लक्ष्य नहीं है, वह साधन नहीं है। और दूसरी बात कि भविष्य की चिंता मत लो,
वर्तमान में रहो। अगर तुम संभोग के आरंभिक भाग में वर्तमान में नहीं रह सकते, तब तुम
कभी वर्तमान में नहीं रह सकते। क्योंकि काम कृत्य की प्रकृति ही ऐसी है। कि तुम वर्तमान
में फेंक दिए जाते हो।

तो वर्तमान में रहो। दो शरीरों के मिलन का सुखा लो, दो आत्माओं के मिलने
का
आनंद लो। और एक दूसरे में खो जाओ। एक हो जाओ। भूल जाओ कि तुम्हें कहीं जाना है। वर्तमान क्षण में जीओं, जहां से कहीं जाना नहीं है। और एक दूसरे से मिलकर एक हो जाओ। उष्णता और प्रेम वह स्थिति बनाते है जिसमें दो व्यक्ति एक दूसरे में पिघलकर खो
जाते है। यही कारण है कि यदि प्रेम न हो तो संभोग जल्दबाजी का काम हो जाता है। तब
तुम दूसरे का उपयोग कर रहे हो। दूसरे में डूब नहीं रहे हो। प्रेम के साथ तुम दूसरे में डूब
सकते हो।

आरंभ का यह एक दूसरे में डूब जाना अनेक अंतदृष्टियां प्रदान करता है। अगर
तुम
संभोग को समाप्त करने की जल्दी नहीं करते हो तो काम-कृत्य धीरे-धीरे कामुक कम और
आध्यात्मिक ज्यादा हो जाता है। जननेंद्रियों भी एक दूसरे में विलीन हो जाती है। तब दो
शरीर ऊर्जाओं के बीच एक गहन मौन मिलन घटित होता है। और तब तुम घंटों साथ रह सकते हो। यह सहवास समय के साथ-साथ गहराता जाता है। लेकिन सोच-विचार मत करो, वर्तमान क्षण में प्रगाढ़ रूप से विलीन होकर रहो। वही समाधि बन जाती है। और अगर तुम
इसे जान सके इसे अनुभव कर सके, इसे उपलब्ध कर सके तो तुम्हारा कामुक चित अकामुक

हो जाएगा। एक गहन ब्रह्मचर्य उपलब्ध हो सकता है। काम से ब्रह्मचर्य उपलब्ध हो सकता है।

यह वक्तव्य विरोधाभासी मालूम होता है। काम से ब्रह्मचर्य उपलब्ध हो सकता
है।
क्योंकि हम सदा से सोचते आए है कि अगर किसी को ब्रह्मचारी रहना है। तो उसे विपरीत
यौन के सदस्य को नहीं देखना चाहिए। उससे नहीं मिलना चाहिए। उससे सर्वथा बचना चाहिए, दूर रहना चाहिए। लेकिन उस हालत में एक गलत किस्म का ब्रह्मचर्य घटित होता है।
जब चित विपरीत यौन के संबंध में सोचने में संबंध में सोचने में संलग्न हो जाता है।
जितना ही तुम दूसरे से बचोगे उतना ही ज्यादा उसके संबंध में सोचने को विवश हो जाओगे। क्योंकि काम मनुष्य की बुनियादी आवश्यकता है, गहरी आवश्यकता है।

तंत्र कहता है कि बचने की, भागने की चेष्टा मत करो, बचना संभव नहीं है। अच्छा
है कि प्रकृति को ही उसके अतिक्रमण का साधन बना लो। लड़ों मत प्रकृति के अतिक्रमण के लिए प्रकृति को स्वीकार करो। अगर तुम्हारी प्रेमिका या तुम्हारी प्रेमी के साथ इस मिलन को अंत की फिक्र किए बिना लंबाया जा सके तो तुम आरंभ में ही बने रहे सकते हो। उतैजना ऊर्जा है और शिखर पर जाकर तुम उसे खो सकते हो। ऊर्जा के खोन से गिरावट आती है। कमजोरी पैदा होती है। तुम उसे विश्राम समझ सकते हो। लेकिन वह उर्जा का अभाव है।
तंत्र तुम्हें उच्चतर विश्राम का आयाम प्रदान करता है। प्रेमी और प्रेमिका एक दूसरे में विलीन होकर एक दूसरे को शक्ति प्रदान करते है। तब वे एक वर्तुल बन जाते है। और उनकी ऊर्जा वर्तुल में घूमने लगती है। वह दोनों एक दूसरे को जीवन ऊर्जा दे रहे है। नव जीवन दे रहे है। इसमे ऊर्जा का ह्रास नहीं होता है। वरन उसकी वृद्धि होती है। क्योंकि विपरीत यौन के साथ संपर्क के द्वारा तुम्हारा प्रत्येक कोश ऊर्जा से भर जाता है। उसे चुनौती मिलती हे। यदि स्खलन न हो, यदि ऊर्जा को फेंका न जाए तो संभोग ध्यान बन जाता है। और
तुम पूर्ण हो जाते हो। इसके द्वारा तुम्हारा विभाजित व्यक्तित्व अविभाजित हो जाता है। अखंड हो जाता है। चित की सब रूग्णता इस विभाजन से पैदा होती है। और जब तुम जुड़ते हो, अखंड होते हो तो तुम फिर बच्चे हो जाते हो। निर्दोष हो जाते हो। और एक बार अगर तुम इस निर्दोषता का उपलब्ध हो गए तो फिर तुम अपने समाज में उसकी जरूरत के अनुसार जैसा चाहो वैसा व्यवहार कर सकते हो। लेकिन तब तुम्हारा यह व्यवहार महज अभिनय होगा, तुम उससे ग्रस्त नहीं होगे। तब यह एक जरूरत है जिसे तुम पूरा कर रहे हो। तब तुम उसमे नहीं हो। तुम मात्र एक अभिनय कर रहे हो। तुम् हें झूठा चेहरा लगाना होगा। क्योंकि तुम एक झूठे संसार में रहते हो। अन्यथा संसार तुम्हें कुचल देगा, मार डालेगा। हमने अनेक सच्चे चेहरों को मारा है। हमने जीसस को सूली पर चढ़ा दिया, क् योंकि वे सच्चे मनुष्य की तरह व्यवहार करने लगे थे। झूठा समाज इसे बर्दाश्त नहीं कर सकता है। हमने सुकरात को जहर दे दिया। क्योंकि वह भी सच्चे मनुष्य की तरह पेश आने लगे थे। समाज जैसा चाहे वैसा करो, अपने लिए और दूसरों के लिए व् यर्थ की झंझट मत पैदा करो। लेकिन जब तुमने अपने सच्चे स्वरूप को जान लिया, उसकी अखंडता को पहचान लिया तो यह झूठा समाज तुम्हें फिर रूग्ण नहीं कर सकता, विक्षिप्त नहीं कर सकता। ‘’काम-आलिंगन के आरंभ में उसकी आरंभिक अग्नि पर अवधान दो, और ऐसा करते हुए
अंत में उसके अंगारे से बचो।‘’ अगर स्खलन होता है तो ऊर्जा नष्ट होती है। और तब अग्नि नहीं बचती। तुम

कुछ प्राप्त किए बिना ऊर्जा खो देते हो।

[illegible]

[illegible] [illegible] [illegible], [illegible] 3

[illegible]-33

[illegible] [illegible]--[illegible] -49

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]--

‘’[illegible]-[illegible] [illegible]‘’

जब प्रेमिका या प्रेमी के साथ ऐसे आलिंगन में, ऐसे प्रगाढ़ मिलन में तुम्हारी इंद्रियाँ पत्तों की तरह कांपने लगें, उस कंपन में प्रवेश कर जाओ।

तुम भयभीत हो गए हो, संभोग में भी तुम अपने शरीर को अधिक हलचल नहीं करने देते हो। क्योंकि अगर शरीर को भरपूर गति करने दिया जाए तो पूरा शरीर इसमें संलग्न हो जाता है तुम उसे तभी नियंत्रण में रख सकते हो जब वह काम-केंद्र तक ही सीमित रहता है। तब उस पर मन नियंत्रण कर सकता है। लेकिन जब वह पूरे शरीर में फैल जाता है तब तुम उसे नियंत्रण में नहीं रख सकते हो। तुम कांपने लगोगे। चीखने चिल्लाने लगोगे। और जब शरीर मालिक हो जाता है तो फिर तुम्हारा नियंत्रण नहीं रहता।

हम शारीरिक गति का दमन करते है। विशेषकर हम स्त्रियों को दुनियाभर में शारीरिक हलन-चलन करने से रोकते है। वे संभोग में लाश की तरह पड़ी रहती है। तुम उनके साथ जरूर कुछ कर रहे हो, लेकिन वे तुम्हारे साथ कुछ भी नहीं करती, वे निष्क्रिय सहभागी बनी रहती है। ऐसा क्यों होता है। क्यों सारी दुनिया में पुरूष स्त्रियों को इस तरह दबाते है।

कारण भय है। क्योंकि एक बार अगर स्त्री का शरीर पूरी तरह कामाविष्ट हो जाए तो पुरूष के लिए उसे संतुष्ट करना बहुत कठिन है। क्योंकि स्त्री एक श्रृंखला में, एक के बाद एक अनेक बार आर्गाज्म के शिखर को उपलब्ध हो सकती है। पुरूष वैसा नहीं कर सकता। पुरूष एक बार ही आर्गाज्म के शिखर अनुभव को छू सकता है। स्त्री अनेक बार छू सकती है। स्त्रियों के ऐसे अनुभव के अनेक विवरण मिले है। कोई भी स्त्री एक श्रृंखला में तीन-तीन बार शिखर-अनुभव को प्राप्त हो सकती है। लेकिन पुरूष एक बार ही हो सकता है। सच तो यह है कि पुरूष के शिखर अनुभव से स्त्री और-और शिखर अनुभव को उत्तेजित होती है। तैयार होती है। तब बात कठिन हो जाती है। फिर क्या किया जाए?

स्त्री को तुरंत दूसरे पुरूष की जरूरत पड़ जाती है। और सामूहिक कामाचार निषिद्ध है। सारी दुनिया में हमने एक विवाह वाले समाज बना रखे है। हमें लगता है कि स्त्री का दमन करना बेहतर है। फलत: अस्सी से नब्बे प्रतिशत स्त्रियां शिखर अनुभव से वंचित रह जाती है। वे बच्चों को जन्म दे सकती है। यह और बात है। वे पुरूष को तृप्त कर सकती है। यह भी और बात है। लेकिन वे स्वयं कभी तृप्त नहीं हो पाती। अगर सारी दुनिया की स्त्रियां इतनी कड़वाहट से भरी है, दुःखी है, चिड़चिड़ी है, हताश अनुभव करती है। तो यह स्वाभाविक है। उनकी बुनियादी जरूरत पूरी नहीं होती।

कांपना अद्भुत है। क्योंकि जब संभोग करते हुए तुम कांपते हो तो तुम्हारी ऊर्जा पूरे शरीर में प्रवाहित होने लगती है। सारे शरीर में तरंगायित होने लगती है। तब तुम्हारे शरीर का अणु-अणु संभोग में संलग्न हो जाता है। प्रत्येक अणु जीवंत हो उठता है। क्योंकि तुम्हारा प्रत्येक अणु काम अणु है।

तुम्हारे जन्म में दो कास-अणु आपस में मिले और तुम्हारा जीवन निर्मित हुआ, तुम्हारा शरीर बना। वे दो काम अणु तुम्हारे शरीर में सर्वत्र छाए है।

यद्यपि उनकी संख्या अनंत गुनी हो गई है। लेकिन तुम्हारी बुनियादी इकाई काम-अणु ही है। जब तुम्हारा समूचा शरीर कांपता है तो प्रेमी प्रेमिका के मिलन के साथ-साथ तुम्हारे शरीर के भीतर प्रत्येक पुरूष-अणु स्त्री अणु से मिलता है। वह कंपन यही बताता है। यह पशुवत मालूम पड़ेगा। लेकिन मनुष्य पशु है और पशु होने में कुछ गलती नहीं है।

यह दूसरा सूत्र कहता है: ''ऐसे काम-आलिंगन में जब तुम्हारी इंद्रियाँ पत्तों की भांति कांपने लगे।''

मानो तूफान चल रहा है और वृक्ष कांप रहा है। उनकी जड़ें तक हिलने लगती है। पत्ता-पत्ता कांपने लगता है। यही हालत संभोग में होती है। कामवासना भारी तूफान है। तुम्हारे आर-पार एक भारी ऊर्जा प्रवाहित हो रही है। कंपो। तरंगायित होओ। अपने शरीर के अणु-अणु को नाचने दो। और इस नृत्य में दोनों के शरीरों को भाग लेना चाहिए। प्रेमिका को भी नृत्य में सम्मिलित करो। अणु-अणु को नाचने दो। तभी तुम दोनों का सच्चा मिलन होगा। और वह मिलन मानसिक नहीं होगा। वह जैविक ऊर्जा का मिलन होगा।

''उस कंपन में प्रवेश करो।''

और कांपते हुए उससे अलग-थलग मत रहो, मन का स्वभाव दर्शक बने रहने का है। इसलिए अलग मत रहो। कंपन ही बन जाओ। सब कुछ भूल जाओ और कंपन ही कंपन हो रहो। ऐसा नहीं कि तुम्हारा शरीर ही कांपता है। तुम पूरे के पूरे कांपते हो, तुम्हारा पूरा अस्तित्व कांपता है। तुम खुद कंपन ही बन जाते हो। तब दो शरीर और दो मन नहीं रह जाएंगे। आरंभ में दो कंपित ऊर्जाऐं है, और अंत में मात्र एक वर्तुल है। दो नहीं रहे।

इस वर्तुल में क्या घटित होगा। पहली बात तो उस समय तुम अस्तित्वगत सत्ता के अंश हो जाओगे। तुम एक सामाजिक चित नहीं रहोगे। अस्तित्वगत ऊर्जा बन जाओगे। तुम पूरी सृष्टि के अंग हो जाओगे। उस कंपन में तुम पूरे ब्रह्मांड के भाग बन जाओगे। वह क्षण महान सृजन का क्षण है। ठोस शरीरों की तरह तुम विलीन हो गए हो, तुम तरल होकर एक दूसरे में प्रवाहित हो गए हो। मन खो गया, विभाजन मिट गया, तुम एकता को प्राप्त हो गए।

यही अद्वैत है। और अगर तुम इस अद्वैत को अनुभव नहीं करते हो अद्वैत का सारा दर्शन शास्त्र व्यर्थ है। वह बस शब्द ही शब्द है। जब तुम इस अद्वैत अस्तित्वगत क्षण को जानोंगे तो ही तुम्हें उपनिषद समझ में आएँगे। और तभी तूम संतों को समझ पाओगे। कि जब वे जागतिक एकता की अखंडता की बात करते है तो उनका क्या मतलब है। तब तुम जगत से भिन्न नहीं होगे। उससे अजनबी नहीं होगे। तब पूरा अस्तित्व तुम्हारा घर बन जाता है। और इस भाव के साथ कि पूरा अस्तित्व मेरा घर है। सारी चिंताएं समाप्त हो जाती है। फिर कोई द्वंद्व न रहा, संघर्ष न रहा, संताप न रहा।

उसका ही लाओत्से ताओ कहते है, शंकर अद्वैत कहते है। तब तुम उसके लिए कोई अपना शब्द भी दे सकते हो। लेकिन प्रगाढ़ प्रेम आलिंगन में ही उसे सरलता से अनुभव किया जाता है। लेकिन जीवंत बनो, कांपो, कंपन ही बन जाओ।

[illegible]

[illegible] [illegible] [illegible], [illegible]—3

[illegible]-33

[illegible] [illegible]--[illegible] -50

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]--

''[illegible]-[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]''

एक बार तुम इसे जान गए तो प्रेम पात्र की, साथी की जरूरत नहीं है। तब तुम कृत्य का
स्मरण उसमे प्रवेश कर सकते हो। लेकिन पहले भाव का होना जरूरी है। अगर भाव से परिचित
हो तो साथ के बिना भी तुम कृत्य में प्रवेश कर सकते हो।
यह थोड़ा कठिन है, लेकिन यह होता है। और जब तक यह नहीं होता, तुम पराधीन रहते हो। एक पराधीनता निर्मित हो जाती है। और यह प्रवेश अनेक कारणों से घटित होता है। अगर तुमने उसका अनुभव किया हो, अगर तुमने उस क्षण को जाना हो जब तुम नहीं थे, सिर्फ तरंगायित ऊर्जा एक होकर साथी के साथ वर्तुल बना रही थी। तो उस क्षण साथी भी नहीं रहता है, केवल तुम होते हो। वैसे ही उस क्षण तुम्हारे साथी के लिए तुम नहीं होते, वही होता है। वह एकता तुममें होती है। साथी नहीं रह जाता है। और यह भाव स्त्रियों के लिए सरल है। क्योंकि स्त्रियों आँख बंद करके ही संभोग में उतरती है। इस विधि का प्रयोग करते समय आँख बंद रखना अच्छा है। तो ही वर्तुल का आंतरिक भाव एकता का आंतरिक भाव निर्मित हो सकता है। और फिर उसका स्मरण करो। आँख बंद कर लो और ऐसे लेट जाओ मानो तुम अपने साथी के साथ लेटे हो, स्मरण करो और भाव करो लो और ऐसे तुम्हारा शरीर कांपने लगेगा। तरंगायित होने लगेगा। उसे होने दो। यह बिलकुल भूल जाओ कि दूसरा नहीं है। ऐसे गति करो जैसे कि दूसरा उपस्थित है। शुरू में कल्पना से ही काम लेना होना। एक बार जाना गए कि यह कल्पना नहीं, यथार्थ है; तब दूसरा मौजूद है। ऐसे गति करो जैसे कि तुम वस्तुत: संभोग में उतर रहे हो। वह सब कुछ करो जो
तुम अपने प्रेम-पात्र के साथ करते; चीखो, डोलो, कांपो। शीध्र वर्तुल निर्मित हो जाएगा। और यह वर्तुल अद्भुत है। शीध्र ही तुम्हें अनुभव हो जायेगा। लेकिन यह वर्तुल पुरूष स्त्री से नहीं बना है। अगर तुम पुरूष हो तो सारा ब्रह्मांड स्त्री बन गया है। और अगर तुम स्त्री होता सारा ब्रह्मांड पुरूष बन गया है। अब तुम खुद अस्तित्व के साथ प्रगाढ़ मिलन में हो और उसके लिए दूसरा द्वार की तरह अब नहीं है। दूसरा मात्र द्वार है। किसी स्त्री के साथ संभोग करते हुए तुम दरअसल अस् तित्व के साथ संभोग में होते हो। सत्री मात्र द्वार है। पुरूष मात्र द्वार है। दूसरा संपूर्ण के लिए द्वार भर है। लेकिन तुम इतनी जल्दी में हो कि तुम्हें इसका एहसास नहीं होता। अगर तुम प्रगाढ़ मिलन में, सघन आलिंगन में घंटो रह सको तो दूसरा विस्मृत हो जाएगा। दूसरा समष्टि का विस्तार भर रह जाएगा। अगर एक बार इस विधि को तुमने जान लिया तो अकेले भी तुम इसका प्रयोग कर सकते हो। और जब अकेले रहकर प्रयोग करोगे। तो वह तुम्हें एक नयी स्वतंत्रता प्रदान करेगा। वह तुम्हें दूसरे से स्वतंत्र कर देगा। वह वस्तुत: समूचा अस् तित्व दूसरा हो जाता है। तुम्हारी प्रेमिका या तुम्हारा प्रेमी हो जाता है। और फिर तो इस विधि का प्रयोग निरंतर किया जा सकता है। और तुम सतत अस्तित्व के साथ आलिंगन में संवाद में रह सकते हो। और तब तुम इस विधि का प्रयोग दूसरे आयामों में भी कर सकते हो सुबह टहलते
हुए इसका प्रयोग कर सकते हो। तब तुम हवा के साथ, उगते सूरज के साथ, चाँद-तारों के साथ, पेड़-पौधों के साथ। तुम लयबद्ध होने का अनुभव कर सकते हो। रात में तारों को देखते हुए इस विधि का प्रयोग कर सकते हो। चाँद को देखते हुए कर सकते हो। तुम पूरी सृष्टि के साथ काम-भोग में उतर सकते हो। अगर तुम्हें इसके घटित होने का राज पता चल जाए। निर्मित हो जाये, लेकिन मनुष्य के साथ प्रयोग आरंभ करना अच्छा है। कारण यह है कि मनुष्य तुम्हारे सबसे निकट है। वे तुम्हारे लिए जगत के निकटतम अंश है। लेकिन फिर उन्हें छोड़ा जा सकता है। उनके बिना भी चलेगा। तुम छलांग ले सकते हो और द्वार को बिलकुल भूल सकते हो।

‘’ऐसे मिलन का स्मरण करके भी रूपांतरण होगा।‘’
और तुम रूपांतरित हो जाओगे। तुम नए हो जाओगे।
तंत्र काम का उपयोग वाहन के रूप में करता है। वह ऊर्जा है, उसे वाहन या माध्यम बनाया जा सकता है। काम तुम्हें रूपांतरित कर सकता है। वह तुम्हें अतिक्रमण की अवस्था को, समाधि को उपलब्ध करा सकता है। लेकिन हम गलत ढंग से काम का उपयोग करते है। और गलत ढंग स्वाभाविक ढंग नहीं है। इस मामले में पशु भी हमसे बेहतर है। वे स्वभाविक ढंग से काम का उपयोग करते है। हमारे ढंग बड़े विकृत है। काम पाप है। यह बात निरंतर प्रचार से मनुष्य के मन में इतनी गहरी बैठ गई है कि अवरोध बन गई है। उसके चलते तुम कभी अपने को काम म उतरने की पूरी छूटी नहीं देते, तुम कभी उससे उन्मुक्त भाव से नहीं प्रवेश करते। तुम्हारा एक अंश सदा अलग खड़े होकर उसकी निंदा करता है। और यह बात नयी पीढ़ी के लिए भी सच है। वे भला कहते हो कि हमारे लिए काम कोई समस्या नहीं है। और हम उसके दमित से ग्रस्त नहीं है। कि वह हमारे लिए टैबू नहीं रहा। लेकिन बात इतनी आसान नहीं है। तुम अपने अचेतन को इतनी आसानी से नहीं पोंछ सकते, वह सदियों में निर्मित हुआ है। मनुष्य का पूरा अतीत तुम्हारे साथ है। हो सकता है। कि तुम चेतना में काम की निंदा न करते होओ। तुम उसे पाप न भी कहते हो। लेकिन तुम्हारा अचेतन सतत उसकी निंदा में लगा है। तुम कभी समग्रता से काम कृत् य में नहीं होते। सदा ही कुछ अंश बाहर रह जाता है। और वही बाहर रह गया अंश विभाजन पैदा करता है, टूट पैदा करता है। तंत्र कहता है, काम में समग्रता से प्रवेश करो। अपनी सभ्यता को, अपने धर्म को, संस्कृति और आदर्श को भूल जाओ। काम कृत्य में उतरो, पूर्णता से, समग्रता से उतरो। अपने किसी भी अंश को बाहर मत छोड़ो। सर्वथा निर्विचार हो जाओ। तभी यह बोध होता है। कि तुम किसी को साथ एक हो गए हो। और तब एक होने के इस भाव को साथी से पृथक किया जा सकता है। और उसे पूरे ब्रह्मांड के साथ जोड़ा जा सकता है। तब तुम वृक्ष के साथ, चाँद तारों के साथ, किसी भी चीज के साथ काम-क्रीड़ा में उतर सकते हो। एक बार तुम्हें वर्तुल बनाना आ जाए तो किसी भी चीज के साथ यह वर्तुल निर्मित किया जा सकता है।
तुम अपने भीतर भी एक वर्तुल का निर्माण कर सकते हो। क्योंकि मनुष्य दोनों
है, पुरूष और स्त्री दोनों है। पुरूष के भीतर स्त्री है और स्त्री के भीतर पुरूष है। तुम दोनों हो, क्योंकि दोनों ने मिलकर तुम्हें निर्मित किया है। तुम्हारा निर्माण स्त्री और पुरूष दोनों के द्वारा हुआ है। इसलिए तुम्हारा आधा अंश सदा दूसरा है। तुम बाहरी सब कुछ को पूरी तरह भूल जाओ। और वह वर्तुल तुम्हारे भीतर निर्मित हो जाएगा। इस वर्तुल के बनते ही तुम्हारा पुरूष तुम्हारी स्त्री के आलिंगन में होता है। और तुम्हारे भीतर की स्त्री भीतर के पुरूष के आलिंगन में होती है। और तब तुम अपने साथ ही आंतरिक काम-आलिंगन में होते हो। और इस वर्तुल के बनने पर ही सच्चा ब्रह्मचर्य उपलब्ध होता है। अन्यथा सब ब्रह्मचर्य विकृति है और उससे समस्याएं ही समस्याएं जनम लेती है। और जब यह वर्तुल तुम्हारे भीतर निर्मित होता है तो तुम मुक्त हो जाते हो। तंत्र यही कहता है: कामवासना गहनत्म बंधन है, लेकिन उसका उपयोग परम मुक्
ति के लिए किया जा सकता है। उसे एक वाहन बनाया जा सकता है। जहर को औषधि बनाया जा सकता है। लेकिन उसके लिए विवेक जरूरी है। तो किसी चीज की निंदा मत करो। वरन उसका उपयोग करो। किसी चीज के विरोध में
मत होओ। उपाय निकालों कि उसका उपयोग किया जाए। उसको रूपांतरित किया जाए। तंत्र जीवन का गहन स्वीकार है, समग्र स्वीकार है। तंत्र अपने ढंग की सर्वथा अनूठी साधना है। अकेली साधना है। सभी देश और काल में तंत्र का यह अनूठापन अक्षुण्ण रहा है। और तंत्र कहता है, किसी चीज को भी मत फेंको, किसी चीज के भी विरोध में

मत जाओ। किसी चीज के साथ संघर्ष मत करो, क्योंकि द्वंद्व में, संघर्ष में मनुष् य अपने प्रति ही विध्वंसात्मक हो जाता है।
सभी धर्म कामवासना के विरोध में है। वे उससे डरते है। क्योंकि कामवासना महान ऊर्जा है। उससे उतरते ही तुम नहीं बचते हो। उसका प्रवाह तुम्हें कहीं से कहीं बहा ले जाता है। यही भय का कारण है। इससे ही लोग अपने और इस प्रवाह के बीच एक दीवार, एक अवरोध खड़ा कर लेते है। ताकि दोनों बंट जाएं, ताकि यह प्रबल शक्ति तुम्हें अभिभूत न करे। ताकि तुम उसके मालिक बन रहो। लेकिन तंत्र का कहना है—और केवल तंत्र का कहना है—कि यह मालिकीयत झूठी
है। रूग्ण है। क्योंकि तुम सच में इस प्रवाह से पृथक नहीं हो सकते हो। वह प्रवाह तुम हो। सभी विभाजन झूठे होंगे। सभी विभाजन थोपे हुए होंगे। बुनियादी बात यह है कि विभाजन संभव ही नहीं है। क्योंकि तुम्हीं वह प्रवाह हो, तुम उसके अंग हो, उसकी एक लहर हो। संभव है कि तुम बर्फ की तरह जम गए हो। और इस तरह तुमने अपने को प्रवाह से अलग कर लिया है। लेकिन वह जमना, वह अलग होना मृतवत हो गई है। कोई भी आदमी वास्तव में जीवन नहीं है। तुम नदी में बहते हुए मुर्दों जैसे हो। पिघलो।
तंत्र कहता है: पिघलने चेष्टा करो। हिमखंड की तरह मत जीओं। पिघलो और नदी
के साथ एक हो जाओ। नदी के साथ एक होकर, नदी में विलीन होकर बोधपूर्ण होओ और तब रूपांतरण घटित होता है। तब रूपांतरण है। संघर्ष से नहीं, बोध से रूपांतरण घटित होता है। ये तीन विधियां बहुत वैज्ञानिक विधियां है। लेकिन तब काम या सेक्स वही नहीं रहता है जो तुम उसे समझते हो, तब वह कुछ और ही चीज है। तब सेक्स कोई क्षणिक राहत नहीं है, तब वह ऊर्जा को बाहर फेंकना नहीं है। तब इसका अंत नहीं आता, तब वह ध्यानपूर्ण वर्तुल बन जाता है। ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग—3 प्रवचन-33

तंत्र सूत्र--विधि -51 काम संबंधि चौथा सूत्र--

‘’बहुत समय बाद किसी मित्र से मिलने पर जो हर्ष होता है, उस हर्ष में लीन होओ।‘’
उस हर्ष में प्रवेश करो और उसके साथ एक हो जाओ। किसी भी हर्ष से काम चलेगा। यह एक उदाहरण है। ‘’बहुत समय बाद किसी मित्र से मिलने पर जो हर्ष होता है।‘’ तुम्हें अचानक कोई मित्र मिल जाता है जिसे देखे हुए बहुत दिन, बहुत वर्ष
हो गए है। और तुम अचानक हर्ष से, आह्लाद से भर जाते हो। लेकिन अगर तुम्हारा ध् यान मित्र पर है, हर्ष पर नहीं तो तुम चूक रहे हो। और यह हर्ष क्षणिक होगा। तुम् हारा सारा ध्यान मित्र पर केंद्रित होगा, तुम उससे बातचीत करने में मशगूल रहोगे। तुम पुरानी स्मृतियों को ताजा करने में लगे रहोगे। तब तुम इस हर्ष को चूक जाओगे। और हर्ष भी विदा हो जाएगा। इसलिए जब किसी मित्र से मिलना हो और अचानक तुम्हारे ह्रदय में हर्ष उठे तो उस हर्ष पर अपने को एकाग्र करो। उस हर्ष को महसूस करो। उसके साथ एक हो जाओ। और तब हर्ष से भरे हुए और बोधपूर्ण रहते हुए अपने मित्र को मिलो। मित्र को बस परिधि पर रहने दो और तुम अपने सुख के भाव के में केंद्रित हो जाओ। अन्य अनेक स्थितियों में भी यह किया जा सकता है। सूरज उग रहा है और तुम

अचानक अपने भीतर भी कुछ उगता हुआ अनुभव करते हो। तब सूरज को भूल जाओ, उसे परिधि पर ही रहने दो और तुम उठती हुई उर्जा के अपने भाव में केंद्रित हो जाओ। जब तुम उस पर ध्यान दोगे, वह भाव फैलने लगेगा। और वह भाव तुम्हारे सारे शरीर पर, तुम् हारे पूरे अस्तित्व पर फैल जाएगा। और बस दर्शन ही मत बने रहो। उसमे विलीन हो जाओ।
ऐसे क्षण बहुत थोड़े होते है, जब तुम हर्ष या आह्लाद अनुभव करते हो, सुख
और आनंद से भरते हो। और तुम उन्हें भी चूक जाते हो। क्योंकि तुम विषय केंद्रित होते हो। जब भी प्रसन्नता आती है। सुख आता है, तुम समझते हो कि यह बाहर से आ रहा है।
किसी मित्र से मिलने हो, स्वभावत: लगता है कि सुख मित्र से आ रहा है। मित्र के मिलने से आ रहा है। लेकिन यह हकीकत नहीं है। सुख सदा तुम्हारे भीतर है। मित्र तो सिर्फ परिस्थिति निर्मित करता है। मित्र ने सुख को बाहर आने का अवसर दिया। और उसने तुम्हें उस सुख को देखने में हाथ बंटाया। यह नियम सुख के लिए ही नहीं। सब चीजों के लिए है; क्रोध, शोक, संताप, सुख,
सब पर लागू होता है। ऐसा ही है। दूसरे केवल परिस्थिति बनाते है जिसमे जो तुम् हारे भीतर छिपा है वह प्रकट हो जाता है। वे कारण नहीं है। वे तुम्हारे भीतर कुछ पैदा नहीं करते है। जो भी घटित हो रहा है वह तुम्हें घटित हो रहा है। वह सदा है। मित्र का मिलन सिर्फ अवसर बना, जिसमे अव्यक्त व्यक्त हो रहा है। अप्रकट हो गया।
जब भी यह सुख घटित हो, उसके आंतरिक भाव में स्थित रहो और तब जीवन में सभी चीजों के प्रति तुम्हारी दृष्टि भिन्न हो जाएगी। नकारात्मक भावों के साथ भी यह प्रयोग किया जा सकता है। जब क्रोध आए तो उस व्यक्ति की फिक्र मत करो जिसने क्रोध करवाया, उसे परिधि पर छोड़ दो और तुम क्रोध ही हो जाओ। क्रोध को उसकी समग्रता में अनुभव करो, उसे अपने भीतर पूरी तरह घटित होने दो। उसे तर्क-संगत बनाने की चेष्टा मत करो। यह मत कहो कि इस व्यक्ति ने क्रोध करवाया। उस व्यक्ति की निंदा मत करो। वह तो निर्मित मात्र है। उसका उपकार मानों कि उसने तुम्हारे भीतर दमित भावों को प्रकट होने का मौका दिया। उसने तुम पर कहीं चोट की। और वहां से घाव छिपा पडा था। अब तुम्हें उस घाव का पता चल गया है। अब तुम वह घाव ही बन जाओ। विधायक या नकारात्मक, किसी भी भाव के साथ प्रयोग करो और तुम में भारी परिवर्तन घटित होगा। अगर भाव नकारात्मक है तो उसके प्रति सजग होकर तुम उससे मुक्त हो जाओगे। और अगर भाव विधायक है तो तुम भाव ही बन जाओगे। अगर यह सुख है तो तुम सुख बन जाओगे। लेकिन यह क्रोध विसर्जित हो जाएगा। और नकारात्मक और विधायक भावों का भेद भी यही है। अगर तुम किसी भाव के प्रति सजग होते हो और उससे वह भाव विसर्जित हो जाता है तो समझना कि वह नकारात्मक भाव है। और यदि किसी भाव के प्रति सजग होने से तुम वह भाव ही बन जाते हो और वह भाव फैलकर तुम्हारे तन-प्राण पर छा जाता है तो समझना कि वह विधायक भाव है। दोनों मामलों में बोध अलग-अलग ढंग से काम करता है। अगर कोई जहरीला भाव है तो बोध के द्वारा तुम उससे मुक्त हो सकते हो। और अगर भाव शुभ है, आनंदपूर्ण है, सुंदर है तो तुम उससे एक हो जाते हो। बोध उसे प्रगाढ़ कर देता है। मेरे लिए यही कसौटी है। अगर कोई वृति बोध से सघन होती है तो वह शुभ है और
अगर बोध से विसर्जित हो जाती है तो उसे अशुभ मानना चाहिए। जो चीज होश के साथ न जी सके वह पाप है और जो होश के साथ वृद्धि को प्राप्त हो वह पुण्य है। पुण्य और पाप सामाजिक धारणाएं नहीं है। वे आंतरिक उपलब्धियां है। अपने बोध को जगाओं, उसका उपयोग करो। यह ऐसा ही है जैसे कि अंधकार है और
तुम दीया जलाये हो। दीए के जलते ही अंधकार विदा हो जाएगा। प्रकाश के आने से अँधेरा नहीं हो जाता है। क्योंकि वस्तुत: अँधेरा नहीं था। अंधकार प्रकाश का आभाव है। वह प्रकाश की अनुपस्थिति था। लेकिन प्रकाश के आने से वहां मौजूद अनेक चीजें प्रकाशित भी हो जाएंगी। प्रकट हो जायेगी। प्रकाश के आने से ये

अलमारियां, किताबें, दीवारें विलीन नहीं हो जाएंगी। अंधकार में वे छिपी थी, तुम उन्हें नहीं देख सकते थे। प्रकाश के आने से अंधकार विदा हो गया लेकिन उसके साथ ही जो यथार्थ था वह प्रकट हो गया। बोध के द्वारा जो भी अंधकार की तरह नकारात्मक है—धृणा, क्रोध, दुःख, हिंसा—वह विसर्जित हो जाएगा और उसके साथ ही प्रेम, हर्ष, आनंद जैसी विधायक चीजें पहली बार तुम पर प्रकट हो जाएंगी।

इसलिए ‘’बहुत समय के बाद किसी मित्र से मिलने पर जो हर्ष होता है, उस हर्ष में लीन होओ।‘’

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible]- 3 [illegible]-33

[illegible] [illegible]--[illegible] -52 [illegible] [illegible] [illegible]--

‘’भोजन करते हुए या पानी पीते हुए भोजन या पानी का स्वाद ही बन जाओ, और उससे भर जाओ।‘’

हम खाते रहते है, हम खाए बगैर नहीं रह सकते। लेकिन हम बहुत बेहोशी में भोजन करते है—यंत्रवत। और अगर स्वाद न लिया जाए तो तुम सिर्फ पेट को भर रहे हो।

तो धीरे-धीरे भोजन करो, स्वाद लेकिर करो और स्वाद के प्रति सजग रहो। और स्वाद के प्रति सजग होने के लिए धीरे-धीरे भोजन करना बहुत जरूरी है। तुम भोजन को बस निगलने मत जाओ। आहिस्ता-आहिस्ता उसका स्वाद लो और स्वाद ही बन जाओ। जब तुम मिठास अनुभव करो तो मिठास ही बन जाओ। और तब वह मिठास सिर्फ मुंह में नहीं, सिर्फ जीभ में नहीं, पूरे शरीर में अनुभव की जा सकती है। वह सचमुच पूरे शरीर में फैल जायेगी। तुम्हें लगेगा कि मिठास—या कोई भी चीज—लहर की तरह फैलती जा रही है। इसलिए तुम जो कुछ खाओ, उसे स्वाद लेकर खाओ और स्वाद ही बन जाओ।

यहीं तंत्र दूसरी परंपराओं से सर्वथा भिन्न है। विपरीत मालूम पड़ता है। जैन अस्वाद की बात करते है। महात्मा गांधी ने तो अपने आश्रम में अस्वाद को एक नियम बना लिया था। नियम था कि खाओ स्वाद के लिए मत खाओ। स्वाद मत लो, स्वाद को भूल जाओ। वे कहते थे कि भोजन आवश्यक है, लेकिन यंत्रवत भोजन करो। स्वाद वासना है, स्वाद मत लो।

तत्र कहता है कि जितना स्वाद ले सको उतना स्वाद लो। ज्यादा से ज्यादा संवेदनशील बनो, जीवंत बनो। इतना ही नहीं कि संवेदनशील बनो, स्वाद ही बन जाओ। अस्वाद से तुम्हारी इंद्रियाँ मर जाएंगी। उनकी संवेदनशीलता जाती रहेगी। और संवेदनशीलता के मिटने से तुम अपने शरीर को, अपने भावों को अनुभव करने में असमर्थ हो जाओगे। और तब फिर तुम अपने सिर के केंद्रित होकर रह जाओगे। और सिर में केंद्रित होना विभाजित होना है।

तंत्र कहता है: अपने भीतर विभाजन मत पैदा करो। स्वाद लेना सुंदर है, संवेदनशील होना सुंदर है। और तुम जितने संवेदनशील होगे, उतने ही जीवंत होगे। और जितने तुम जीवंत होगे, उतना ही अधिक जीवन तुम्हारे अंतस में प्रविष्ट होगा। तुम अधिक खुलोगें। उन्मुक्त अनुभव करोगे।

तुम स्वाद लिए बिना कोई चीज खा सकते हो। यह कठिन नहीं है। तुम किसी को छुए बिना छू सकते हो। यह भी कठिन नहीं है। हम वही तो करते है, तुम किसी के साथ हाथ मिलाते हो और उसे स्पर्श नहीं करते। स्पर्श करने के लिए तुम्हें हाथ तक आना पड़ेगा। हाथ में उतरना पड़ेगा। स्पर्श करने के लिए तुम्हें तुम्हारी हथेली, तुम्हारी अगुलियां बन जाता पड़ेगा—मानो तुम, तुम्हारी आत्मा तुम्हारे हाथ में उतर आयी है। तभी तुम स्पर्श कर सकते हो, वैसे तुम किसी का हाथ में हाथ लेकिर

भी उससे अलग रह सकते हो। तब तुम्हारा मुर्दा हाथ किसी के हाथ में होगा। वह छूता हुआ मालूम पड़ेगा। लेकिन वह छूता नहीं है। हम स्पर्श करना भूल गए है। हम किसी को स्पर्श करने से डरते है। क्योंकि स्पर्श करना कामुकता का प्रतीक बन गया है। तुम किसी भीड़ में, बस या रेल में अनेक लोगों को छूते हुए खड़े हो सकते हो, लेकिन वास्तव में न तुम उन्हें छूते हो और न वे तुम्हें छूते है। सिर्फ शरीर एक दूसरे को स्पर्श कर रहा है। लेकिन तुम दूर-दूर हो। और तुम इस फर्क को समझ सकते हो। अगर तुम भीड़ में किसी को वास् तव में स्पर्श करो तो वह बुरा मान जाएगा। तुम्हारा शरीर बेशक छू सकता है। लेकिन तुम्हें उस शरीर में नहीं होना चाहिए। तुम्हें शरीर से अलग रहना चाहिए, मानो तुम शरीर में नहीं हो, मानो कोई मुर्दा शरीर स्पर्श कर रहा है।
यह संवेदनहीनता बुरी है। यह बुरी है, क्योंकि तुम अपने को जीवन से बचा
रहे हो। तुम मृत्यु से इतने भयभीत हो और तुम मरे हुए हो। सच तो यह है कि तुम्हें भयभीत होने की कोई जरूरत नहीं है। क्योंकि कोई भी मरने वाला नहीं है। तुम तो पहले से ही मरे हुए हो। और तुम्हारे भयभीत होने का कारण भी यही है कि तुम कभी जीए ही नहीं। तुम जीवन से चूकते रहे और मृत्यु करीब आ रही है। जो व्यक्ति जीवित है वह मृत्यु से नहीं डरेगा। क्योंकि वह जीवित है। जब
तुम वास्तव में जीते हो तो मृत्यु का भय नहीं रहता। तब तुम मृत्यु को भी जी सकते हो। जब मृत्यु आएगी तो तुम इतने संवेदनशील होगे कि मृत्यु का भी आनंद लोगे मृत्यु एक महान अनुभव बनने वाली है। अगर तुम सचमुच जिंदा हो तो तुम मृत् यु को भी जी सकते हो। और तब मृत्यु-मृत्यु नहीं रहेगी। अगर तुम मृत्यु को भी जी सको। जब तुम अपने केंद्र को लौट रहे हो, जब तुम विलीन हो रहे हो, उस क्षण यदि तुम अपने मरते हुए शरीर के प्रति भी सजग रह सको, अगर तुम इसको भी जी सको—तो तुम अमृत हो गए। ‘’भोजन करते हुए या पानी पीते हुए भोजन या पाना का स्वाद ही बन जाओ। और उससे भर जाओ।‘’ पानी पीते हुए पानी का ठंडापन अनुभव करो। आंखे बंद कर लो, धीरे-धीरे पीनी
पीओ और उसका स्वाद लो। पानी की शीतलता को महसूस करो और महसूस करे कि तुम शीतलता ही बन गए हो। जब तुम पानी पीते हो तो पानी की शीतलता तुममें प्रवेश करती है। तुम्हारे अंग बन जाती है। तुम्हारा मुंह शीतलता को छूता है। तुम्हारी जीभ उसे छूती है। और ऐसे वह तुम में प्रवेश हो जाती है। उसे तुम्हारे पूरे शरीर में प्रविष्ट होने दो। उसकी लहरों को फैलने दो और तुम अपने पूरे शरीर में वह शीतलता महसूस करोगे। इस भांति तुम्हारी संवेदनशीलता बढ़ेगी। विकसित होगी। और तुम ज्यादा जीवंत, ज्यादा भरे पूरे हो जाओगे। हम हताश, रिक्त और खाली अनुभव करते है। और हम कहते है कि जीवन रिक्त है। लेकिन जीवन के रिक्त होने का कारण हम स्वयं है। हम जीवन को भरते ही नहीं है। हम उसे भरने नहीं देते है। हमने अपने चारों और एक कवच लगा रखा है—सुरक्षा कवच। हम वलनरेबल होने से, खुले रहने से डरते है। हम अपने को हर चीज से बचाकर रखते है। और तब हम कब्र बन जाते है। मृत लाशों।
तंत्र कहता है: जीवंत बनो, क्योंकि जीवन ही परमात्मा है। जीवन के अतिरिक्
त कोई परमात्मा नहीं है। तुम जितने जीवंत होगे उतने ही परमात्मा होगे। और जब समग्रता जीवंत होगे तो तुम्हारे लिए कोई मृत्यु नहीं है। ओशो
विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-3 प्रवचन—33

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—53 (ओशो)

[illegible]-[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]--

''[illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] [illegible]''

हम है , लेकिन हमें बोध नहीं है कि हम है। हमें आत्म -स्मरण नहीं है। तुम खा रहे हो , या तुम स्नान कर रहे हो , या टहल रहे हो। लेकिन टहलते हुए तुम्हें इका बोध नहीं है कि मैं हूं। सजग नहीं हो कि मैं हूं सब कुछ है , केवल तुम नहीं हो। झाड़ है , मकान है , चलते रास्ते है , सब कुछ है ; तुम अपने चारों और की चीजों के प्रति सजग हो , लेकिन सिर्फ अपने होने के प्रति कि मैं हूं , सजग नहीं हो। लेकिन अगर तुम सारे संसार के प्रति भी सजग हो और अपने प्रति सजग नहीं हो तो सब सजगता झूठी है। क्यों ? क्योंकि तुम्हारा मन सबको प्रतिबिंबित कर सकता है। लेकिन वह तुम्हें प्रतिबिंबित नहीं कर सकता। और अगर तुम्हें अपना बोध है तो तुम मन के पार चले गए।

तुम्हारा आत्म -स्मरण तुम्हारे मन के प्रतिबिंबित नहीं हो सकता , क्योंकि तुम मन के पीछे हो। मन उन्हीं चीजों को प्रतिबिंबित करता है जो उसके सामने होती है। तुम केवल दूसरों को देख सकते हो। तुम अपने को नहीं देख सकेत। तुम् हारी आंखें सबको देख सकती है। लेकिन अपने को नहीं देख सकती। अगर तुम अपने को देखना चाहो तो तुम्हें दर्पण की जरूरत होगी। दर्पण में ही तुम अपने आप को देख सकते हो। लेकिन उसके लिए तुम्हें दर्पण के सामने खड़ा होना होगा। तुम्हारा मन दर्पण है तो वह सारे संसार को प्रतिबिंबित कर सकता है। लेकिन तुम्हें प्रतिबिंबित नहीं कर सकता। क्योंकि तुम अपने सामने नहीं खड़े हो सकते। तुम सदा पीछे हो , दर्पण के पीछे हो।

यह विधि कहती है कि कुछ भी करते हुए —गाते हुए , देखते हुए , स्वाद लेते हुए —यह बोध बना रहे कि मैं हूं , और शाश्वत को आविर्भूत कर लो। आपने भीतर उसे आविष्कृत कर लो जो सतत प्रवाह है , उर्जा है , जीवन है , शाश्वत है।

लेकिन हमें अपना बोध नहीं है। पश्चिम में गुरजिएफ ने आत्म -स्मरण का प्रयोग एक बुनियादी विधि के रूप में किया। वह आत्म -स्मरण इसी सूत्र से लिया गया है। और गुरजिएफ की सारी साधना इसी एक सूत्र पर आधारित है। सूत्र है कि तुम कुछ भी करते हुए अपने को स्मरण रखो।

यह बहुत कठिन होगा। यह सरल मालूम होता है। लेकिन तुम भूल -भूल जाओगे। तीन या चार सेकेंड के लिए भी तुम अपना स्मरण नहीं रख सकते। तुम्हें लगेगा कि मैं अपना स्मरण कर रहा हूं और अचानक तुम किसी दूसरे विचार में चले गए। अगर यह विचार भी उठा कि ठीक , मैं तो अपना स्मरण कर रहा हूं तो तुम चूक गये। क्योंकि यह विचार आत्म -स्मरण नहीं है। आत्म -स्मरण में कोई विचार नहीं होगा। तुम बिलकुल रिक्त और खाली होगे। और आत्म -स्मरण कोई मानसिक प्रक्रिया नहीं है। ऐसा नहीं है कि तुम कहते रहो कि हां , मैं हूं। यह कहते ही कि हां , मैं हूं , तुम चूक गये। मैं हूं , यह सोचना एक मानसिक कृत्य है। यह अनुभव करो कि में हूं। इन शब्दों को नहीं अनुभव करना है। उसे शब्द मत दो , बस अनुभव करो कि मैं हूं , इन शब्दों को नहीं अनुभव करना है। और शब्द मत दो , बस अनुभव करो कि मैं हूं। सोचो मत , अनुभव करो।

प्रयोग करो। कठिन है , लेकिन अगर तुम प्रयोग में लगन से लगे रहे तो यह घटित होता है। टहलते हुए स्मरण रखो कि मैं हूं। अपने होने को महसूस करो। ऐसा किसी विचार या धारणा को नह लाना है। बस महसूस करना है। मैं तुम्हारा हाथ छूता हूं , या तुम्हारे सिर पर अपना हाथ रखता हूं , तो उसे शब्द मत दो। सिर्फ स्पर्श को अनुभव करो। और इस अनुभव में स्पर्श को ही नहीं , स्पर्शित को भी अनुभव करो। तब तुम्हारी चेतना के तीर में दो फलक होंगे।

तुम वृक्षों की छाया में टहल रहे हो ; वृक्ष है , हवा है , उगता सूरज है , यह

है तुम्हारे चारो और का संसार और तुम उसके प्रति सजग हो। घूमते हुए क्षण भर के लिए ठिठक जाओ और अचानक स्मरण करो कि मैं हूं, यह शब्द हिन अनुभूति, क्षण मात्र के लिए ही सही। तुम्हें सत्य की एक झलक दे जायेगी। क्षण भर के लिए तुम अपने आस् तित्व के केंद्र पर फेंक दिये जाते हो। तुम दर्पण के पीछे हो, तुम प्रतिबिंबों के जगत के पार चले गए हो। जब तुम अस्तित्वगत हो। और यह प्रयोग तुम किसी भी समय कर सकते हो। इसके लिए न किसी खास जगह की जरूरत है और न किसी समय की। तुम यह नहीं कह सकते कि मेरे पास समय नहीं है। तुम भोजन करते हुए इसका प्रयोग कर सकते हो। तुम स्नान करते हुए इसका प्रयोग कर सकते हो। चलते हुए या बैठे हुए। किसी समय भी यह प्रयोग कर सकते हो। कोई भी काम करते हुए अचानक अपना स्मरण करो और फिर अपने होने की उस झलक को जारी रखने की चेष्टा करो। यह कठिन होगा। एक क्षण लगेगा कि यह रहा और दूसरे क्षण यह विदा हो जाएगा।
कोई विचार प्रवेश कर जायेगा। कोई प्रतिबिंब, कोई चित्र मन में तैर जायेगा। और तुम उसमें उलझ जाओगे। उससे दुःखी मत होना, निराश मत होना। ऐसा होता है, क्योंकि हम जन्मों-जन्मों से प्रतिबिंबों में उलझे रहे है। यह यंत्रवत प्रक्रिया बन गई है। अविलंब आप ही आप हम प्रतिबिंबों में उलझ जाते हो। लेकिन अगर एक क्षण के लिए भी तुम्हें झलक मिल गई तो वह प्रारंभ के लिए काफी है। और वह क्यों काफी है?
क्योंकि तुम्हें कभी दो क्षण एक साथ नहीं मिलेंगे। सदा एक क्षण ही तुम् हारे हाथ में होता है। और अगर तुम्हें एक क्षण के लिए भी झलक मिल जाए तो तुम उसमें ज्यादा बने रह सकते हो। सिर्फ चेष्टा की जरूरत है। सतत चेष्टा की। तुम् हें एक क्षण ही तो दिया जाता है। दो क्षण तो कभी एक साथ नहीं आते। दो क्षणों की फिक्र मत करो। तुम्हें सदा एक क्षण ही मिलेगा। और अगर तुम्हें एक क्षण के लिए बोध हो सके तो जीवन भर के लिए बोध बना रह सकता है। अब सिर्फ प्रयत्न चाहिए। और यह प्रयोग सारा दिन चल सकता है। जब भी स्मरण आए, अपने को स्मरण करो। ‘’हे कमलाक्षी, हे सुभगे, गाते हुए, देखते हुए, स्वाद लेते हुए, यह बोध बना
रहे कि मैं हूं, और शाश्वत अविभूत होता है। जब सूत्र कहता है कि ‘’बोध बना रहे कि मैं हूं’’, तो तुम क्या करोगे? क्या तुम याद करोगे कि मेरा नाम रमा है, या जीसस है, या और कुछ है? क्या तुम स्मरण करोगे कि मैं फलां परिवार का हूं, फलां धर्म का हूं, फलां परंपरा का हूं। क्या तुम याद करोगे कि मैं अमुक देश का हूं? अमुक जाती का हूं, अमुक मत का हूं, क्या तुम स्मरण करोगे कि मैं कम्युनिस्ट हूं, या हिंदू हूं, ईसाई हूं? तुम क्या स् मरण करोगे?
यह सूत्र कहता है कि ‘’बोध बना रहे कि मैं हूं’’ इतना ही कहता है कि मैं हूं। किसी नाम की जरूरत नहीं है। किसी देश कि जरूरत नहीं है। सिर्फ होने की जरूरत है। कि तुम हो। तो अपने से मत कहो कि तुम कौन हो। यह मत कहो कि मैं यह हूं, वह हूं। तुम हो, इस अस्तित्व को स्मरण करो। लेकिन यह कठिन हो जाता है। क्योंकि हम कभी मात्र अस्तित्व को स्मरण नहीं करते हम सदा उसे स्मरण करते है जो एक लेबल है, पदवी है, नाम है, वह अस्तित्व नहीं है। जब भी तुम अपने बारे में सोचते हो, तुम अपने नाम, धर्म देश, इत्यादि की सोचते हो, तुम कभी इस मात्र आस्तित्व की नहीं सोचते हो कि मैं हूं। तुम इसकी साधना कर सकते हो। अपनी कुर्सी में या किसी पेड़ के नीचे विश्राम पूर्वक बैठ जाओ, सब कुछ भूल जाओ और इस अपने होने पन को अनुभव करो। न ईसाई हो, न हिंदू हो, ने बौद्ध हो, न जैन हो, न अंग्रेज न, न जर्मन, बस तुम हो। इसकी प्रतीति भर हो, भव भर हो। और तब तुम्हें यह याद रखना आसान होगा कि मैं हूं, जो यह सूत्र कहता है।

‘’बोध बना रहे कि मैं हूं, और शाश्वत आविर्भूत होता है।‘’
जिस क्षण तुम्हें बोध होता है कि मैं कौन हूं, उसी क्षण तुम्हें शाश्वत
की धारा में फेंक दिया जाता है। जो असत्य है, उसकी मृत्यु निश्चित है। केवल सत् य शेष रह जाता है। यही कारण है कि हम मृत्यु से इतना डरते है। क्योंकि झूठ को मिटना ही है। असत्य सदा नहीं रह सकता। और हम असत्य से बंधे है। असत्य से तादात्म्य किए बैठे है। तुममें जो हिंदू है। वह तो मरेगा—जो-जो नाम रूप है वह मरेगा।
लेकिन तुम्हारे भीतर जो सत्य है। जो अस्तित्वगत है। जो आधारभूत है, वह अमृत है। जब नाम रूप भूल जाते है और तुम्हारी दृष्टि भीतर क अनाम और अरूप पर पड़ती है, तब तुम शाश्वत में प्रवेश कर गए। ‘’बोध बना रहे कि मैं हूं, और शाश्वत आर्विर्भूत होता है।‘’
यह विधि अत्यंत कारगर विधियों में से एक है। और हजारों साल से सदगुरूओं
ने इका प्रयोग किया है। बुद्ध इसे उपयोग में लाए, महावीर लाए, जीसस लाए। और आधुनिक जमाने में गुरूजिएफ ने इसका उपयोग किया। सभी विधियों में इस विधि की क्षमता सर्वाधिक है। इसका प्रयोग करो। यह समय लेगा, महीनों लग सकते है। जब ओस्पेंस्की गुरूजिएफ के पास साधना कर रहा था तो उसे तीन म 4 हीने तक इस
बात के लिए बहुत श्रम करना पडा कि आत्मा-स्मरण की एक झलक मिले। निरंतर तीन महीने तक ओस्पेंस्की एक एकांत घर में रहकर एक ही प्रयोग करता रहा—आत्म स्मरण का प्रयोग। तीस व्यक्तियों ने उस प्रयोग में हिस्सा लिया। और पहले ही सप्ताह के खत्म होते-होते सत्ताईस व्यक्ति भाग खड़े हुए। सिर्फ तीन बचे। सारा दिन वे और कोई काम नहीं करते थे। सिर्फ स्मरण करते थे कि मैं हूं। सत्ताईस लोगों को ऐसा लगा कि इस प्रयोग से हम पागल हो जाएंगे। हमारे विक्षिप्त होने के सिवाय कोई चारा नहीं है। और वे गायब हो गये। वे फिर कभी नहीं वापस आये। वे गुरूजिएफ से फिर कभी नहीं मिले। हम जैसे है, असल में हम विक्षिप्त है। पागल ही है। जो नहीं जानते है कि हम क्या है, हम कौन है, वे पागल ही है। लेकिन हम इस विक्षिप्तता को ही स्वास्थ्य माने बैठे है। जब तुम पीछे लौटने की कोशिश करोगे। जब तुम सत्य से संपर्क साधोगे तो वह विक्षिप्तता जैसा पागलपन जैसा ही मालूम पड़ेगा। हम जैसे है, जो है उसकी पृष्टभूमि से सत्य ठीक विपरीत है। और अगर तुम जैसे हो उसको ही स्वास् थ्य मानते हो तो सत्य जरूर पागलपन मालूम पड़ेगा।
लेकिन तीन व्यक्ति प्रयोग में लगे रहे। उन तीन में पी. डी. ओस्पेंस्की भी
एक था। वे तीन महीने तक प्रयोग में जुटे रहे। पहले महीने के बाद उन्हें मात्र होने की—कि मैं हूं, झलक मिलने लगी। दूसरे महीने के बाद मैं भी गिर गया और उन् हें मान होने पन की हूं—पन की झलक मिलने लगी। इस झलक में मात्र होना था। मैं भी नहीं था, क्योंकि मैं भी एक संज्ञा है। शुद्ध अस्तित्व न मैं है न तू, वह बस है। और तीसरे महीने के बाद हूं, पन का भाव भी विसर्जित हो गया। क्योंकि हूं-पन का भाव भी एक शब्द है। यह शब्द भी विलीन हो जाता है। तब तुम बस हो और तब तुम जानते हो कि तुम कौन हो।
इस घड़ी के आने के पूर्व तुम नहीं पूछ सकते कि मैं कौन हूं। या तुम सतत पूछते रह सकते हो कि मैं कौन हूं। और मन जो भी उत्तर देगा वह गलत होगा। अप्रासंगिक होगा। तुम पूछते जाओ कि मैं कौन हूं, मैं कौन हूं, एक क्षण आएगा जब तुम यह प्रश्न नहीं पूछ सकते। पहले सब उत्तर गिर जाते है और फिर खुद प्रश्न भी गिर जाता है। और खो जाता है। सब कुछ कि मैं कौन हूं। गिर जाता है, तुम जानते हो कि तुम कौन हो। गुरजिएफ ने एक सिरे से इस विधि का प्रयोग किया: सिर्फ यह स्मरण रखना है कि
मैं हूं। रमण महर्षि ने इसका प्रयोग दूसरे सिरे से किया। उन्होंने इस खोज को

कि ‘’मैं कौन हूं। ‘’ पूरा ध्यान बन दिया। उन्होंने इस खोज को कि ‘’मैं कौन हूं। ‘’ और इसके उत्तर में मन जो भी कहे उस पर विश्वास मत करो। मन कहेगा कि क्या व्यर्थ का सवाल उठ रहे हो। मन कहेगा कि तुम यह हो , तुम वह हो , कि तुम मर्द हो। तुम औरत हो। तुम शिक्षित हो , अशिक्षित हो , कि गरीब हो , अमीर हो , मन उत्तर दिए जाता है। लेकिन तुम प्रश्न पूछते चले जाना। कोई भी उत्तर मत स्वीकार करना। क्योंकि मन के लिए दिए गये सभी उत्तर गलत होगे। वे उत्तर तुम्हारे झूठे हिस्से से आते है। वे शब्दों से आते है। वे शास्त्रों से आते है। वे तुम्हारे संस्कारों से आते है , वे समाज से आते है। सच तो यह है कि वे सब के सब दूसरों से आते है। तुम्हारे नहीं है। तुम पूछे ही चले जाओ। इस मैं कौन हूं , के तीन को गहरे से गहरे में उतरने दो।

एक क्षण आएगा जब कोई उत्तर नहीं आएगा। वह सम्यक क्षण होगा। अब तुम उत्तर के करीब हो। जब कोई उत्तर नहीं आता है , तुम उत्तर के करीब होते हो। क्योंकि अब मन मौन हो रहा है। अब तुम मन से बहुत दूर निकल गए हो। जब कोई उत्तर नहीं होगा और जब तुम्हारे चारो और एक शून्य निर्मित हो जाएगा तो तुम्हारा प्रश्न पूछना व्यर्थ मालूम होगा।

अचानक तुम्हारा प्रश्न भी गिर जायेगा। और प्रश्न के गिरते ही मन का आखिरी हिस्सा भी गिर गया। खो गया क्योंकि यह प्रश्न भी मन का ही था। वे उत्तर भी मन के थे और यह प्रश्न भी मन का था। दोनों विलीन हो गए। अब तुम बस हो।

इसे प्रयोग करो। अगर तुम लगन से लगे रहे तो पूरी संभावना है कि यह विधि तुम्हें सत्य की झलक दे जाए। और सत्य शाश्वत है।

□□□

□□□□□□□□ □□□□ □□□□□, □□□-3

□□□□□□—35

□□□□□□□□ □□□□ □□□□□□ □□□□—54 (□□□)

□□□□-□□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□--

‘‘□□□□-□□□□, □□□ □□□□ □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□□□□□ □□, □□□ □□□□□□□□ □□□□‘‘

तुम्हें प्यास लगी है , तुम पानी पीते हो , उससे एक सूक्ष्म संतोष प्राप्त होता है। पानी को भूल जाओ। प्यास को भी भूल जाओ और जो सूक्ष्म संतोष अनुभव हो रहा है उसके साथ रहो। उस संतोष से भर जाओ , बस संतुष्ट अनुभव करो।

लेकिन मनुष्य का मन बहुत उपद्रवी है। वह केवल असंतोष और अतृप्ति अनुभव करता है। वह कभी संतोष को अनुभव नहीं करता। अगर तुम असंतुष्ट हो तो तुम उसे अनुभव करोगे और अंसतोष से भर जाओगे। जब तुम प्यासे हो तो तुम्हें प्यास अनुभव होती है। तुम्हारा गला सूखता है। और अगर प्यास और बढ़ती है तो वह पूरे शरीर में महसूस होने लगती है। और एक क्षण ऐसा भी आता है जब तुम्हें ऐसा नहीं लगता कि मैं प्यासा हूं , तुम्हें लगता है कि मैं प्यास ही हो गया। अगर तुम किसी मरुस्थल में हो और पानी मिलने की कोई भी आशा नहीं हो तो तुम्हें ऐसा नहीं लगेगा कि मैं प्यासा हूं , तुम्हें लगेगा की मैं प्यास ही हो गया हूं।

असंतोष अनुभव में आता है , दुःख और संताप अनुभव में आते है। जब तुम दुःख में होते हो तो तुम दुःख ही बन जाते हो। यही कारण है कि पूरा जीवन नरक हो जाता है। तुमने कभी विधायक को नहीं अनुभव किया। तुमने सदा नकारात्मक को अनुभव किया है। जीवन वैसा दुःख नहीं है जैसा हमने उसे बना रखा है। दुःख हमारी महज व्याख्या है।

बुद्ध यहीं और अभी सुख में है। इसी जीवन में सुखी है। कृष्ण नाच रहे है और बांसुरी बजा रहे है। इसी जीवन में यही और अभी , जहां हम दुःख में है , वही कृष्ण नाच सकते है। जीवन न दुःख है और न जीवन आनंद है , दुःख और आनंद हमारी व्याख्याएं

है। हमारी दृष्टियां है, हमारे रुझान है, हमारे देखने के ढंग है। यह तुम्हारे मन पर निर्भर है कि वह जीवन को किस तरह लेता है। अपने ही जीवन को स्मरण करो। और विश्लेषण करो। क्या तुमने कभी संतोष के, परितृप्ति के, सुख के, आनंद के क्षणों का हिसाब रखा है? तुमने उसका कोई हिसाब नहीं रखा है। लेकिन तुमने अपने दुःख, पीड़ा और संताप का खूब हिसाब रख है। और तुम्हारे पास इसका बड़ा संग्रह है। तुम एक संग्रहीत नरक हो और यह तुम्हारा चुनाव है। कोई दूसरा तुम्हें इस नरक में नहीं ढकेल रहा है। यह तुम्हारा ही चुनाव है। मन नरक को पकड़ता है, उसका संग्रह करता है और फिर खुद नकार बन जाता है। और फिर वह दुस्चक्र हो जाता है। तुम्हारे चित में जितना नकार इकट्टा होता है। तुम उतने ही नकारात्मक हो जाते हो। और फिर नकार का संग्रह बढ़ता जाता है। समान-समान को आकर्षित करता है। और यह सिलसिला जन्मों-जन्मों से चल रहा है। तुम अपनी नकारात्मक दृष्टि के कारण सब कुछ चूक रहे हो।

यह विधि तुम्हें विधायक दृष्टि देती है। सामान्य मन और उसकी प्रक्रिया
के बिलकुल विपरीत है यह विधि। जब भी संतोष मिलता हो, जिस किसी कृत्य में भी संतोष मिलता हो। उसे वास्तविक करो। उसे अनुभव करो, उसके साथ हो जाओ। यह संतोष किसी बड़े विधायक अस्तित्व की झलक बन सकता है। यहां हर चीज महज एक खिड़की है। अगर तुम किसी दुःख के साथ तादात्म्य करते
हो तो तुम दुःख की खिड़की से झांक रहे हो। और दुःख और संताप की खिड़की नरक की तरह ही खुलती है। और अगर तुम किसी संतोष के क्षण के साथ आनंद और समाधि के क्षण के साथ एकात्म होते हो तो तुम दूसरी खिड़की खोल रहे हो। अस्तित्व तो वही है, लेकिन तुम्हारी खिड़कियाँ अलग-अलग है।
‘’जहां-जहां, जिस किसी कृत्य में संतोष मिलता हो, उसे वास्तविक करो।‘’ बेशर्त, जहां कही भी संतोष मिले, उसे जीओं। तुम किसी मित्र से मिलते हो और तुम्हें प्रसन्नता अनुभव होती है। तुम्हें अपनी प्रेमिका या अपने प्रेमी से मिलकर सुख अनुभव होता है। इस अनुभव को वास्तविक बनाओ, उस क्षण सुख ही हो जाओ और उस सुख को द्वार बना लो। तब तुम्हारा मन बदलने लगेगा। और तब तुम सुख इकट्ठा करने लगोगे। तब तुम्हारा मन विधायक होने लगेगा। और वही जगह भिन्न दिखने लगेगी। झेन संत बोकोजू ने कहा है कि जगत वही है, लेकिन कुछ भी वही नहीं है, क् योंकि मन वही नहीं है। सब कुछ वही रहता है, लेकिन कुछ भी वहीं नहीं रहता है, क् योंकि मैं बदल जाता हूं। तुम संसार को बदलने की कोशिश करते हो, लेकिन तुम कछ भी करो। जगत वही का
वही रहता है। क्योंकि तुम वही के वही रहते हो। तुम एक बड़ा घर बना लेते हो, तुम् हें एक बड़ी कार मिल जाती है। तुम्हें सुंदर पत्नी मिल जाती है। लेकिन उससे कुछ भी नहीं बदलेगा। बड़ा घर बड़ा नहीं होगा। सुंदर पत्नी सुंदर नहीं होगी। बड़ी कार भी छोटी ही रहेगी। क्योंकि तुम वहीं के वहीं हो। तुम्हारा मन, तुम् हारा रुझान, सब कुछ वहीं के वही है। तुम चीजें तो बदल लेते हो लेकिन अपने को नहीं बदलते। एक दुःखी आदमी झोपड़ी को छोड़कर महल में रहने लगता है, लेकिन अपने को नहीं बदलता, तो पहले वह झोंपड़े में दुःखी था, अब वह महल में दुःखी है। उसका दुःख महल का दुःख होगा, लेकिन वह दुःखी होगा। तुम अपने साथ अपने दुःख लिए चल रहे हो और तुम जहां भी जाओगे अपने साथ रहोगे। इसलिए बुनियादी तौर पर बाहरी बदलाहट नहीं है। वह बदलाहट का आभास है। तुम्हें लगता है कि बदलाहट हुई, लेकिन दरअसल बदलाहट नहीं होती है। केवल एक बदलाहट, केवल एक क्रांति, केवल एक आमूल रूपांतरण संभव है और वह यह कि तुम्हारा चित नकारात्मक से विधायक हो जाए। अगर तुम्हारी दृष्टि दुःख से बंधी है तो तुम नरक में हो और अगर तुम्हारी दृष्टि सुख से जुड़ी है तो वही नरक स्वर्ग हो जाता है। इसे प्रयोग करो, यह तुम्हारे जीवन की गुणवता को रूपांतरित कर देगा। लेकिन तुम तो गुणवता में नहीं, परिमाण में उत्सुक हो कि कैसे ज्यादा धन
हो जाए। तुम धन का की गुणवता में नहीं, उसके परिणाम में, मात्रा में उत्सुक हो

और एक अमीर आदमी दरिद्र हो सकता है। सच्चाई यही है, क्योंकि जो व्यक्ति जीजों और जीजों के परिमाण में उत्सुक है वह इस बात में सर्वथा अपरिचित है कि उसके भीतर एक और आयाम है, यह गुणवत्ता का आयाम है। और यह आयाम बदलता है जब तुम्हारा मन विधायक होता है। तो कल सुबह से दिन भर यह स्मरण रहे: जब भी कुछ सुंदर और संतोषजनक हो, जब भी
कुछ आनंददायक अनुभव आए, उसके प्रति बोधपूर्ण होओ। चौबीस घंटों में ऐसे अनेक क्षण आते है—सौंदर्य, संतोष और आनंद के क्षण—ऐसे अनेक क्षण आते है जब स्वर्ग तुम्हारे बिलकुल करीब होता है। लेकिन तुम नरक से इतने आसक्त हो, इतने बंधे हो कि उन क्षणों को चूकते चले जाते हो। सूरज उगता है, फूल खिलते है, पक्षी चहचहाते है, पेड़ों से होकर हवा गुजरती है। वैसे क्षण घटित हो रहे है। एक बच्चा निर्दोष आंखों से तुम्हें निहारता है। और तुम्हारे भी एक सूक्ष्म सुख का भाव उदित हो जाता है। या किसी की मुस्कुराहट तुम्हें आह्लाद से भर देती है। अपने चारों ओ देखो ओ उसे खोजों जो आनंददायक है और उससे पूरित हो जाओ, भर जाओ। उसका स्वाद लो, उससे भर जाओ और उसे अपने पूरे प्राणों पर छा जाने दो, उसके साथ एक हो जाओ। उसकी सुगंध तुम्हारे साथ रहेगी। वह अनुभूति पूरे दिन तुम्हारे भीतर गूँजती रहेगी। और वह अनुगूँज तुम्हें ज्यादा विधायक होने में सहयोगी होगी।
यह प्रक्रिया भी और-और बढ़ती जाती है। यदि सुबह शुरू करो तो शाम तक तुम सितारों के प्रति, चाँद के प्रति, रात के प्रति, अंधेर के प्रति, ज्यादा खुले होगे। इसे एक चौबीस घंटे प्रयोग की तरह करो और देखो कि कैसा लगता है। और एक बार तुमने जान लिया कि विधायकता तुम्हें दूसरे ही जगत में ले जाती है। तो तुम उससे कभी अलग नहीं होगे। तब तुम्हारा पूरा दृष्टिकोण नकार से विधायक में बदल जाएगा। तब तुम संसार को एक भिन्न दृष्टि से, एक नयी दृष्टि से देखोगें। मुझे एक कहानी याद आती है। बुद्ध का एक शिष्य अपने गुरु से विदा ले रहा
है। शिष्य का नाम था पूर्ण काश्यप। उसने बुद्ध से पूछा कि मैं आपका संदेश लेकिर कहां जाऊं? बुद्ध ने कहा कि तुम खुद ही चुन लो। पूर्ण काश्यप ने कहा कि मैं बिहार के एक सुदूर हिस्से की तरफ जाऊँगा—उसका नाम सूखा था—उसका नाम सूख था—मैं सूखा प्रांत की तरफ जाऊँगा। बुद्ध ने कहा कि अच्छा हो कि तुम अपना निर्णय बदल लो, तुम किसी और जगह जाओ क्योंकि सूखा प्रांत के लोग बड़े क्रूर, हिंसक, और दुष्ट है। और अब तक कोई व् यक्ति वहां उन्हें अहिंसा, प्रेम और करूणा का उपदेश सुनाने नहीं गया है। इसलिए अपना चुनाव बदल डालों। पर पूर्ण काश्यप ने कहा: मुझे जाने की आज्ञा दें, क् योंकि वहां कोई नहीं गया है और किसी को तो जाना ही चाहिए।
बुद्ध ने कहा की इससे पहले मैं तुम्हें वहां जाने की आज्ञा दूँ। मैं तुमसे तीन प्रश्न पूछना चाहता हूं। अगर उस प्रांत के लोग तुम्हारा अपमान करें तो तुम्हें कैसा लगेगा? पूर्ण काश्यप ने कहा: मैं समझूंगा कि वे बड़े अच्छे लोग है। जो केवल मेरा अपमान कर रहे है, वे मुझे मार भी सकते थे। बुद्ध ने कहा अब दूसरा प्रश्न, अगर वे लोग तुम्हें मारें-पीटें भी तो तुम्हें कैसा लगेगा? पूर्ण काश्यप ने कहा: मैं समझूंगा कि वे बड़े अच्छे लोग है। वे मेरी हत्या भी कर सकते थे। लेकिन वे सिर्फ मुझे पीट रहे है। बुद्ध ने कहा: अब तीसरा प्रश्न, अगर वे लोग तुम्हारी हत्या कर दें तो मरने के क्षण में तुम कैसा अनुभव करोगे। पूर्ण काश्यप ने कहा: ‘’ मैं आपको और उन लोगों को धन्यवाद दूँगा। अगर वे मेरी हत्या कर देंगे तो वे मुझे उस जीवन से मुक्त कर देंगे जिसमें न जाने कितनी गलतियां हो सकती थी। वे मुझे मुक्त कर देंगे इसलिए मैं अनुगृहीत अनुभव करूंगा। तो बुद्ध ने कहा: ‘’ अब तुम कहीं भी जा सकते हो, सारा संसार तुम्हारे लिए स् वर्ग है। अब कोई समस्या नहीं है। सारा जगत तुम्हारे लिए स्वर्ग है। तुम कहीं भी जा सकते हो। ऐसे चित के साथ जगत में कहीं भी कुछ भी गलत नहीं हो सकता। और तुम्हें चित
के साथ कुछ भी सम्यक नहीं हो सकता। ठीक नहीं हो सकता। सकारात्मक चित के साथ सब

कुछ गलत हो जाता है। इसलिए नहीं क्योंकि कुछ गलत है, बल्कि इसलिए क्योंकि नकारात्मक चित को गलत ही दिखाई देता है।

''जहां-जहां जिस किसी कृत्य में संतोष मिलता हो, उसे वास्तविक करो।''

यह एक बहुत ही नाजुक प्रक्रिया है, लेकिन बहुत मीठी भी है। और तुम इसमें जितनी गति करोगे, उतनी मीठी होती जाएगी। तुम एक नयी मिठास और सुगंध से भर जाओगे। बस सुंदर को खोजों, कुरूप भी सुंदर हो जाता है। खुशी क्षण की खोज करो, और तब एक क्षण आता है जब कोई दुःख नहीं रह जाता। आनंद की फ्रिक करो, और देर-अबेर दुःख तिरोहित हो जाता है। विधायक चित के लिए सब कुछ सुंदर है।

[illegible]

[illegible] [illegible] [illegible], [illegible]-3

[illegible]—35

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]—55 ([illegible])

[illegible]-[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

''[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]''

तुम्हारी चेतना में कई मोड़ आते है, मोड़ के बिंदु आते है। इन बिंदुओं पर तुम अन्य समयों की तुलना में अपने केंद्र के ज्यादा करीब होते हो। तुम कार चलाते समय गियर बदलते हो और गियर बदलते हुए तुम न्यूट्रल से गुजरते हो। यह न्यूट्रल गियर निकटतम है।

सुबह जब नींद विदा हो रही होती है और तुम जागने लगते हो। लेकिन अभी जागे नहीं हो, ठीक उस मध्य बिंदु पर तुम न्यूट्रल गियर में होते हो। यह एक बिंदु है जहां तुम न सोए हो और न जागे हो, ठीक मध्य में हो; तब तुम न्यूट्रल गियर में हो। नींद से जागरण में आते समय तुम्हारी चेतना की पूरी व्यवस्था बदल जाती है। वह एक व्यवस्था से दूसरी व्यवस्था में छलांग लेती है। और इन दोनों के बीच में कोई व्यवस्था नहीं होती, एक अंतराल होता है। इस अंतराल में तुम्हें अपनी आत्मा की एक झलक मिल सकती है।

वही बात फिर रात में घटित होती है जब तुम अपनी जाग्रत व्यवस्था से नींद की व्यवस्था में, चेतन से अचेतन में छलांग लेते हो। तब फिर एक क्षण के लिए कोई व्यवस्था नहीं होती है। तुम पर किसी व्यवस्था की पकड़ नहीं होती है। क्योंकि तब तुम एक से दूसरी व्यवस्था में छलांग लेते हो। इन दोनों के मध्य में अगर तुम सजग रह सकें, बोधपूर्ण रह सके, इन दोनों के मध्य में अगर तुम अपना स्मरण रख सके, तो तुम्हें अपने सच्चे स्वरूप की झलक मिल जाएगी।

तो इसके लिए क्या करें? नींद में उतरने के पहले विश्राम पूर्ण होओ और आंखे बंद कर लो। कमरे में अँधेरा कर लो। आंखे बंद कर लो। और बस प्रतीक्षा करो। नींद आ रही है। बस प्रतीक्ष करो। कुछ मत करो, बस प्रतीक्षा करो। तुम्हारा शरीर शिथिल हो रहा है। तुम्हारा शरीर भारी हो रहा है। बस शिथिलता को, भारीपन को महसूस करो। नींद की अपनी ही व्यवस्था है, वह काम करने लगती है। तुम्हारी जाग्रत चेतना विलीन हो रही है। इसे स्मरण रखो, क्योंकि वह क्षण बहुत सूक्ष्म है। वह क्षण परमाणु सा छोटा होता है। इस चूक गये तो चूक गये। वह कोई बड़ा अंतराल नहीं है। बहुत छोटा है। यह क्षण भर का अंतराल है, जिसमें तुम जागरण से नींद में प्रवेश कर जाते हो। तो बस पूरी सजगता से प्रतीक्षा करो। प्रतीक्षा किए जाओ।

इसमे थोड़ा समय लगेगा। कम से कम तीन महीने लगते है। तब एक दिन तुम्हें उस क्षण की झलक मिलेगी। जो ठीक बीच में है। तो जल्दी मत करो। यह अभी ही नहीं होगा, यह आज रात ही नहीं होगा। लेकिन तुम्हें शुरू करना है और महीनों प्रतीक्षा करनी है। साधारण: तीन महीने में किसी दिन यह घटित होगा। यह रोज ही घटित हो रहा है। लेकिन तुम्हारी सजगता और अंतराल का मिलन आयोजित नहीं किसा जा सकता। वह घटित हो

ही रहा है। तुम प्रतीक्षा किए जाओ और किसी दिन वह घटित होगा। किसी दिन तुम्हें अचानक यह बोध होगा कि मैं न जागा हूं और न सोया हूं। यह एक बहुत विचित्र अनुभव है, तुम उससे भयभीत भी हो सकते हो। अब तक तुमने
दो ही अवस्थाएं जानी है। तुम्हें जागने का पता है, तुम्हें अपनी नींद का पता है। लेकिन तुम्हें यह नी पता है कि तुम्हारे भीतर एक तीसरा बिंदू भी है। जब तुम न जागे हो और सोये हो। इस बिंदू के प्रथम दर्शन पर तुम भयभीत भी हो सकते हो। आंतरिक भी हो सकते हो। भयभीत मत होओ। आतंरिक मत होओ। जो भी चीज इतनी नयी होगी। अनजानी होगी। वह जरूर भयभीत करेगी। क्योंकि यह क्षण जब तुम्हें इसका बार-बार अनुभव होगा। तुम्हें एक और एहसास देगा कि तुम न जीवित हो और नक मृत, कि तुम न यह हो और न वह। यह अतल खाई जैसा है। नींद और जागरण की व्यवस्थाएं दो पहाड़ियों की भांति है, तुम एक से दूसरे
पर छलांग लगाते हो। लेकिन यदि तुम उसके मध्य में ठहर जाओ तो तुम अतल खाई में गिर जाओगे। और इस खाई का कहीं अंत नहीं है। तुम गिरते जाओगे। गिरते ही जाओगे। सूफियों ने इस विधि का उपयोग किया है। लेकिन जब वे किसी साधक को यक विधि देते है तो सुरक्षा के लिए वे साथ ही एक और विधि भी देते है। सूफी साधना में इस विधि के दिये जाने से पहले दूसरी विधि यह दि जाती है। कि तुम बंद आंखों से कल् पना करो, कि तुम अतल कुएं में गिर रहे हो। और गिरते ही जाओ। गिरते ही जाओ। सतत गिरते ही जाओ। यह कुआं अतल है, तुम कहीं रूक नहीं सकते। यह गिरना कही रूकने वाला नहीं है। तुम रूक सकते हो, आंखें खोलकर कह सकते हो। कि अब और नहीं। लेकिन यह गिरना अपने आप में कही रूकने वाला नहीं है। अगर तुम गिरते रहे तो कुआं अतल है। और वह और-और अंधकारपूर्ण होता जाएगा। सूफी साधना में यह अभ्यास, अतल कुएं में गिरने का अभ्यास पहले कराया जाता
है। और यह अच्छा है। उपयोगी है। अगर तुमने इसका अभया किया और अगर तुमने इसके सौंदर्य को समझा, इसकी शांति को जाना, अनुभव किया, तो तुम जितना चाहे गहरे कुएं में उतर सकते हो। ज्यादा शांत हो सकते हो। संसार बहुत पीछे छूट जायेगा। और तुम्हें लगेगा कि मैं बहुत दूर, बहुत दूर, निकल आया हूं। अंधकार के साथ शांति बढ़ती है। और क्योंकि नीचे गहरे में कहीं कोई तल नहीं है। इसलिए भय पकड़ सकता है। लेकिन तुम्हें मालूम है कि यह सिर्फ कल्पना है, इसलिए तुम इसे जारी रख सकते हो।
इस अभ्यास के द्वारा तुम इस विधि के लिए तैयार होते हो। और फिर जब तुम जागरण और नींद के अंतराल के कुएं में गिरते हो तो यह कल्पना नहीं है, यह यथार्थ है। और यह कुआं भी अतल है। अनंत है। इसीलिए बुद्ध ने इसे शून्य कहां है, उसका अंत नहीं है। और तुम एक बार इसे जान गए तो तुम भी अनंत हो गये। ‘’जब नींद अभी नहीं आयी हो और बाह्य जागरण विदा हो गया हो, उस मध्य बिंदु
पर बोधपूर्ण रहने से आत्मा प्रकाशित होती है।‘’ तब तुम जानते हो कि मैं कौन हूं, मेरा सच्चा स्वभाव क्या है, मेरा प्रमाणिक अस्तित्व क्या है। जागते हुए झूठे हो। और यह तुम भली भांति जानते हो। जब तुम जागे हुए हो, तुम झूठे बने रहते हो। तुम उस समय मुस्कराते हो, जब कि आंसू बहाना ज्यादा सच होता है। तुम्हारे आंसू भी भरोसे योग्य नहीं है। वे भी दिखाऊ हो सकते है। नकली हो सकते है। होने चाहिए इसलिए हो सकते है। तुम्हारी मुस् कुराहट झूठी है। जो लोग चेहरे पढ़ना जानते है वे कह सकते है कि यह मुस्कुराहट रंग-रोगन से ज्यादा नहीं है। भीतर उसकी कोई जड़ें नहीं है। यह मुस्कुराहट बस तुम्हारे चेहरे पर है, होठो पर है। ऊपरी है। यह तुम्हारे प्राणों से नहीं उठी है। उपर से ओढ़ी गई है। यह थोपी गई है। तुम जो कहते हो, जो भी करते हो, सब नकली है। यह जरूरी नहीं है कि तुम यह नकली व्यापार जान बूझकर करते हो। यह जरूरी नहीं है उसके प्रति तुम सर्वथा अंजान भी हो सकते हो। तुम अंजान हो। अन्यथा इस नकली मूढ़ता को सतत जारी रखना बहुत कठिन है। यह व्यापार स्वचालित है। यह झूठ चलता रहता है जब तुम जागे हुए हो और यह झूठ तब भी चलता रहा है जब तुम सोए हुए हो—लेकिन तब और ढंग से चलता है।

तुम्हारे सपने प्रतीकात्मक है, सच नहीं। हैरानी की बात है कि तुम अपने सपनों मे भी सच्चे नहीं हो, तुम अपने सपनों में भी भयभीत हो। और तुम प्रतीक निर्मित करते हो। अब मनोविश्लेषक तुम्हारे सपनों का विश्लेषण करता रहता है। यही उसका धंधा
है। और यह एक भारी धंधा बन गया है। क्योंकि तुम खुद अपने सपनों का विश्लेषण नहीं कर सकते हो। सपने प्रतीकात्मक वे सच नहीं है। वे सिर्फ प्रतीकों के द्वारा कुछ कहते है। अगर तुम अपनी मां की हत्या करना चाहते हो, उसके छुटकारा चाहते हो। तो तुम सपने में उसकी हत्या नहीं करोगे। तुम उसकी जगह किसी ऐसे व् यक्ति की हत्या कर दोगे, जो देखने में तुम्हारी मां जैसा होगा। तुम अपनी चाचा या किसी और की हत्या कर दोगे। तुम अपने सपने में भी प्रमाणिक नहीं हो सकते। यह कारण है कि मनोविश्लेषण की जरूरत पड़ती हे। एक पेशेवर व्यक्ति की जरूरत पड़ती है। जो तुम्हारे सपनों की व्याख्या कर सके। लेकिन तुम सपने को भी एक ढंग से रख सकते हो कि मनोविश्लेषण भी धोखा खा जाए।
तुम्हारे सपने भी सर्वथा झूठे है। लेकिन अगर तुम जागते हुए सच्चे रह सको
तो तुम्हारे सपने सच हो सकते है, तब वे प्रतीकात्मक नहीं होंगे। तब अगर तुम अपनी मां की हत्या करना चाहोगे तो सपने में तुम अपनी मां की ही हत्या करोगे। किसी और स्त्री की नहीं। और फिर व्याख्या करने वालों की जरूरत नहीं होगी। तुम् हें खुद पता होगा की तुम्हारे सपनों का अर्थ क्या है। लेकिन हम इतने झूठे है, धोखेबाज है, कि सपने के एकांत में भी संसार से, समाज से डरते है।
लेकिन यह सिखावन क्यों? गहरे में यह संभावना है कि प्रत्येक व्यक्ति अनिवार्यतः: अपनी मां का विरोध में चला जाए, क्योंकि मां ने तुम्हें सिर्फ जन् म ही नहीं दिया, उसने तुम्हें झूठ और नकली बनने के लिए मजबूर किया है। तुम जो भी हो, अपनी मां के बनाए हुए हो। अगर तुम एक नरक हो तो इसमें तुम्हारी मां का बड़ा हाथ है। सबसे बड़ा हाथ है। अगर तुम दुःख में हो तो उस दुःख में कहीं न कहीं तुम् हारी मां मौजूद है, क्योंकि मां ने तुम्हें जन्म दिया, उसने तुम्हें पाल-पोसकर बड़ा किया। या कहें कि उसने तुम्हें पाल-पोसकर नकली बनाया। उसने तुम्हें तुम् हारी प्रामाणिकता से हटा दिया। तुम्हारा पहला झूठ तुम्हारे और तुम्हारी मां के बीच घटित हुआ है। जब बच्चे ने बोलना भी नहीं सीखा है, उसके पास भाषा भी नहीं है। तब भी वह
झूठ बोल सकता है। देर अबेर वह जान जाता है कि उसके अनेक भाव मां को पसंद नहीं है। मां का चेहरा, उसकी आंखें, उसका व्यवहार, उसकी मुद्रा, सब बात देते है कि उसकी कुछ चीजें पसंद नहीं है। स्वीकृत नहीं है। और तब बच्चा दमन करने लगता है; उसे लगता है कि कुछ गलत है। अभी उसके पास भाषा नहीं है, उसका मन सक्रिय नहीं है। लेकिन उकसा सारा शरीर दमन करने लग जाता है। और फिर उसे पता चलता है कि कभी-कभी कोई बात उसकी मां के द्वारा सराही जाती है। और यह बच्चा मां पर निर्भर है, उसका जीवन ही मां पर निर्भर है। अगर मां उसे छोड़ दे तो वह नहीं जी सकता। उसका पूरा जीवन मां पर केंद्रित है।
इसलिए मां का सब कुछ—उसका व्यवहार, उसकी बात, उसका इशारा—बच्चे के लिए महत्वपूर्ण हो जाता है। अगर बच्चा मुस्कराता है और तब मां उसे प्रेम देती हे। लाड़-दुलार करती है। दूध पिलाती है। छाती से लगती है। तो समझो की बच्चा राजनीति सीखने लगा। वह तब भी मुस्कुराएगा जब उसके भी मुस्कुराहट नहीं होगी। क् योंकि अब वह जानता है कि ऐसा करके वह मां को खुश कर सकता है। अब वह झूठी मुस् कुराहट मुस्कुराएगा। अब एक झूठा व्यक्ति पैदा हो गया। अब एक राजनीतिज्ञ अस् तित्व में आया। अब वह जानता है कि कैसे झूठ हुआ जाए। और यह सब वह अपनी मां के सत्संग से सीखता है। संसार में वह उसका पहला संबंध है। इसलिए जब उसे अपने दुखों का पता चलता है। अपने नरक का बोध होता है, उलझनें घेरेंगी, तब उसे यह भी पता चलेगा कि इस सब में कही न कहीं उसकी मां छिपी है। और पूरी संभावना यह है कि तुम अपनी मां के प्रति शत्रुता अनुभव करते हो। यही कारण है कि सभी संस्कृतियों में जोर दिया जाता है कि मां ही हत्या जघन्य

पाप है। विचार में भी, सपने में भी, तुम मां की हत्या न कर सको। ये दो तुम्हारे झूठे चेहरे है। एक चेहरा तुम्हारे जागरण में प्रकट होता
है। और दूसरा तुम्हारी नींद में। इन दो झूठे चेहरों के बीच एक छोटा सा द्वार है, एक छोटा सा अंतराल है। इस अंतराल में तुम्हें अपने मौलिक चेहरे की झलक मिल सकती है—उस मौलिक चेहरे की जो तब था जब तुम मां से नहीं संबंधित हुए थे। और मां के जरिए समाज से नहीं जुड़े थे। जब तुम अपने साथ अकेले थे जब तुम थे—तुम यह वह नहीं थे। जब कोई विभाजन नहीं था। केवल सत्य था; कुछ असत्य नहीं था। इन दो व् यवस्थाओं के बीच तुम्हें अपनी उस सच्चे चेहरे की झलक मिल सकती है। साधारणत: हम अपने सपनों की चिंता नहीं लेते है, हम सिर्फ जागते समय की चिंता लेते है। लेकिन मनोविश्लेषण तुम्हारे सपनों की ज्यादा चिंता लेते है। वह तुम्हारे जागरण की चिंता नहीं लेता है। क्योंकि वह समझता है कि जागे हुए तुम ज्यादा झूठे होते हो। तुम्हारे सपनों सक कुछ पकड़ा जा सकता है। जब तुम सोए होते हो तो कम सजग होते हो। तब तुम कुछ आरोपित नहीं करते, तब तुम तोड़ते- मरोड़ते नहीं। उस अवस्था में कुछ सत्य पकड़ा जा सकता है। तुम जागते हुए ब्रह्मचारी हो सकते हो, साधु हो सकते हो। लेकिन तुमने अपनी कामवासना को दबा रखा है। वह दबी हुई कामवासना तुम्हारे स्वप्नों में अभिव्यक् त होगी; तुम्हारे सपने कामुक होंगे। ऐसा साधु खोजना कठिन है जो कामुक सपने ने देखता हो। यह असंभव है। तुम्हें कामुक सपनों के बिना अपराधी तो मिल जायेंगे। लेकिन ऐसा धार्मिक आदमी खोजना मुशिकल होगा। जो कामुक सपने न देखता हो। एक व् यभिचारी कामुक सपनों के बिना हो सकता है। क्योंकि तुम जागते हुए जिसे दबाओगें वह तुम्हारे सपनों में उभरकर आएगा। वह तुम्हारे सपनों को प्रभावित करेगा। मनोचिकित्सक तुम्हारे जागरण की फिक्र नहीं करते है, क्योंकि वे जानते है
कि वह बिलकुल झूठ है। अगर कुछ सच्चा, कुछ यथार्थ देखना हो तो वह केवल सपनों में देखा जा सकता है।
लेकिन तंत्र कहता है कि सपने भी उतने सच नहीं है। हालांकि जागरण की तुलना
में वे ज्यादा सच है—यह पहेली सी मालूम पड़ती है। क्योंकि हम सपनों को असत्य मानते है—वे जागरण की घड़ियों की बजाय ज्यादा सच है। क्योंकि सपनों में तुम अपने पहरे पर कम होते हो। नींद में सेंसर सोया रहता है। और दमित चीजें ऊपर आ सकती है। अपने को अभिव्यक्त कर सकती है। हां यह अभिव्यक्ति प्रतीकात्मक होगी; पर प्रतीकों को समझा जा सकता है। सारी दुनियां में मनुष्य के प्रतीक समान है। जागते हुए तुम भिन्न भाषा
बोल सकते हो। लेकिन सपने में तुम वही भाषा बोलते हो जो सारे लोग बोलते है। सारी दुनिया की स्वप्न भाषा एक है। अगर कामवासना दबाई गई है तो दुनियाभर में एक ही तरह का प्रतीक उसे अभिव्यक्त करेंगे। अगर भोजन की इच्छा को दबाया गया है, भूख को दमित किया गया है तो उसे भी सपने में सर्वत्र एक ही तरह के प्रतीक अभिव्यक्त करेंगे। स्वप्न—भाषा है। लेकिन प्रतीकों के कारण ही स्वप्नों के साथ एक दूसरी कठिनाई है। फ्रायड उसका अर्थ एक ढंग से कर सकता है। जुंग उनका अर्थ दूसरे ढंग से कर सकता है। और एडलर उनका अर्थ और भी भिन्न ढंग से कर सकता है। अगर सौ मनोविश्लेषक तुम्हारा विश्लेषण करें तो वे सौ व्याख्याएं करेंगे। और तुम पहले से ज्यादा उलझन में पड़ जाओगे। एक ही चीज की सौ व्याख्याएं तुम्हें और भी भ्रांत कर देंगी। तंत्र कहता है, तुम न जागते हुए सच हो और न सोते हुए सच हो, तुम इन दो अवस् थाओं के बीच में कहीं सच हो। इसलिए न जागरण की फिक्र तरो और नींद की और न स्वप्न की। सिर्फ अंतराल की फिक्र करो। उस अंतराल के प्रति जागों। एक से दूसरी अवस्था में गुजरते हुए इस अंतराल का दर्शन करो। और एक बार तुम जान जाते हो कि यह अंतराल कब आता है। तुम उसके मालिक हो जाते हो। तब तुम्हें कुंजी मिल गई, तुम किसी भी वक्त उस अंतराल को खोलकर उसमे प्रवेश कर सकते हो। तब होने का एक भिन्न आयाम, एक नया आयाम खुलता है। ओशो

विज्ञान भैरव तंत्र, भाग-3 प्रवचन—35

विज्ञान भैरव तंत्र विधि—56 (ओशो)

आत्म-स्मरण की चौथी विधि—
‘’भ्रांतियां छलती है, रंग सीमित करते है, विभाज्य भी अविभाज्य है।‘’
यह एक दुर्लभ विधि है। जिसका प्रयोग बहुत कम हुआ है। लेकिन भारत के एक महानतम शिक्षक शंकराचार्य ने इस विधि का प्रयोग किया है। शंकर ने तो अपना पूरा दर्शन ही इस विधि के आधार पर खड़ा किया है। तुम उनके माया के दर्शन को जानते हो। शंकर कहते है कि सब कुछ माया है। तुम जो भी देखते, सुनते या अनुभव करते हो, सब माया है। वह सत्य नहीं है। क्योंकि सत्य को इंद्रियों से नहीं जाना जा सकता।
तुम मुझे सुन रहे हो और मैं देखता हूं कि तुम मुझे सुन रहे हो, हो सकता है
कि यह सब स्वप्न हो। यह स्वप्न है या नहीं, यह तय करने का कोई उपाय नहीं है। हो सकता है कि मैं स्वप्न देख रहा हूं। कि तुम मुझे सुन रहे हो। यह मैं कैसे जान सकता हूं कि यह स्वप्न नहीं, सत्य है। कोई उपाय नहीं है। च्वांगत्सु के बारे में कहा जाता है कि एक रात उसने स्वप्न देखा कि वह तितली हो गया है। सुबह जागने पर वह बहुत दुःखी था—और वह दुःखी होने वाला व्यक् ति नहीं था। लोगों ने कभी उसे दुःखी नहीं देखा था। उसके शिष्य इकट्ठे हुए और उन्होंने पूछा: गुरूदेव आप इतने दुःखी क्यों है?
च्वांगत्सु ने बताया कि रात के सपने के कारण वह दुःखी है। उसके शिष्यों
ने कहा कि हैरानी की बात है कि आप सपने के कारण दुःखी है। आपने तो हमें यही सिखाया कि यदि सारा संसार भी दुःख देने आए तो दुःखी मत होना। और एक सपने के कारण आप दुःखी है? आप क्या कहते है? च्वांगत्सु ने कहा कि यह सपना ही ऐसा है कि इसमे मैं बहुत उलझन में पड़ गया हूं और इसलिए दुःखी हूं। मैंने सपना देखा कि मैं तितली हो गया हूं। शिष्यों ने पूछा कि इसमें हैरानी की बात क्या है?
च्वांगत्सु ने कहा कि दिक्कत यह है कह अगर च्वांत्सु सपना देख सकता है कि
मैं तितली हो गया हूं। तो इससे उलटा भी हो सकता है। तितली सपना देख सकती है कि मैं च्वांगत्सु हो गयी हूं। यही कारण है कि मैं परेशान हूं कि क्या ठीक है और क्या गलत है? क्या च्वांगत्सु ने सपना देखा था कि वह तितली हो गया है या कि तितली सोने चली गई और उसने सपना देखा कि वह च्वांगत्सु हो गई है। अगर एक बात हो सकती है तो दूसरी भी हो सकती है। और कहा जाता है कि च्वांगत्सु को जीवनभर एक पहेली का हल न मिला, यह सदा उसके साथ रही। यह कैसे तय हो कि में जो अभी तुमसे बात कर रहा हूं, वह सपने में नहीं कर
रहा हूं? यह कैसे तय हो कि तुम सपना नहीं देख रहे हो कि मैं बोल रहा हूं? इंद्रियों से कोई निर्णय संभव नहीं है, क्योंकि सपना देखते हुए सपना यथार्थ मालूम पड़ता है—उतना ही यथार्थ जितना कुछ भी दूसरा यथार्थ मालूम पड़ता है। जब तुम सपना देखते हो तो तुम्हें वह सदा सच्चा मालूम पड़ता है। और जब सपने को सच की तरह देखा जा सकता है तो क्यों सच को सपने की तरह नहीं देखा जा सकता है। शंकर कहते है कि इंद्रियों से यह जानना संभव नहीं है कि जो चीज तुम्हारे सामने है वह सच है या स्वप्न। और जब जानने का उपाय ही नहीं है कि वह सच है या झूठ तो शंकर उसे माया कहते है।
माया का अर्थ झूठ नहीं है, माया का अर्थ है कि यह निर्णय करना असंभव है कि
वह सच है या झूठ। इस बात को स्मरण रखो। पश्चिम की भाषाओं में माया का गलत

अनुवाद हुआ है। पश्चिम की भाषाओं में माया शब्द अयथार्थ या झूठ का अर्थ रखता है। यह अर्थ सही नहीं है। माया का इतना ही अर्थ है कि यह निश्चित नहीं हो सकता है कि कोई चीज यथार्थ है कि अयथार्थ। यह उलझन माया है। यह सारा जगत माया है। तुम उसके संबंध में निशचित नहीं हो सकते। कुछ भी निर्णय पूर्वक नहीं कह सकते। यह जगत निरंतर तुमसे छूट-छूट जाता है, निरंतर बदल जाता है। कुछ से कुछ हो जाता है। यह इंद्रजाल सा लगता है। स्वप्नवत लगता है। और यह विधि इसी दृष्टि से संबधित है। ‘’भ्रांतियां छलती है।‘’
या जो चीज छले वह भ्रांति है। ‘’रंग सीमित करते है, विभाज्य भी अविभाज्य है।‘’
इस माया के जगत में कुछ भी निश्चित नहीं है। सारा जगत इंद्रधनुष के समान
है, वह भासता है, लेकिन है नहीं। जब तुम उससे बहुत दूर होते हो तो वह है, जब करीब जाते हो तो वह खोता जाता है। जितना करीब जाओगे उतना ही वह खोता जाएगा। और अगर तुम उस बिंदू पर पहुंच जाओ जहां इंद्रधनुष दिखाई पड़ता था तो वह बिलकुल खो जायेगा।
सारा जगत इंद्रधनुष के रंगों जैसा है। और सच्चाई यही है। जब तुम दूर होते
हो, सब कुछ आशा पूर्ण दिखाई देता है; जब तुम करीब आते हो, आशा खो जाती है। और जब तुम मंजिल पर पहुंच जाते हो, तब तो राख ही राख बचती है। मृत इंद्रधनुष बचता है जिसके सब रंग उड़ जाते है। कुछ भी वैसा नहीं है जैसा दिखता था। जैसा तुमने चाहा था वैसा कुछ भी नहीं है।
‘’विभाज्य भी अविभाज्य है।‘’ तुम्हारा सब गणित, तुम्हारा सब हिसाब-किताब, तुम्हारी सब धारणाएं, तुम् हारे सब सिद्धांत—सब कुछ व्यर्थ हो जाते है। अगर तुम इस माया को समझने की चेष् टा करोगे तो तुम्हारी चेष्टा ही तुम्हें और भ्रांत कर देगी। वहां कुछ भी निश् चित नहीं है। सब कुछ अनिश्चित है। जगत एक प्रवाह है, परिवर्तनों का प्रवाह है, और तुम्हारे लिए यह तय करने का कोई उपाय नहीं है कि क्या सच है और क्या नहीं है। इस हालत में क्या होगा? अगर तुम्हारी ऐसी दृष्टि हो तो क्या होगा? अगर यह दृष्टि तुममें गहरी उतर जाए कि जिस चीज के संबंध में निश्चित नहीं हो सके वह माया है तो तुम अपने ही आप, सहजता से अपनी तरफ मुड़ जाओगे। तब तुम्हें अपना केंद्र सिर्फ अपने भीतर खोजना होगा। वही एकमात्र सुनिश्चितता है।
इसे इस तरह समझने की कोशिश करो। रात में मैं स्वप्न देख सकता हूं कि मैं तितली बन गया हूं। और मैं स्वप्न मैं स्वप्न में तय नहीं कर सकता कि यह सच है या झूठ है। और अगली सुबह मैं च्वांगत्सु की तरह उलझन में पड़ सकता हूं कि अब कहीं तितली ही यह सपना तो नहीं देख रही कि वह च्वांगत्सु हो गई है। अब ये दो सपने है और तुलना का कोई उपाय नहीं है। कि इनमें कौन सच है और कौन झूठ। लेकिन च्वांगत्सु एक चीज चूक रहा है—वह है स्वप्न देखने वाला। वह केवल सपनों की सोच रहा है, उसकी तुलना कर रहा, और स्वप्न देखने वाले को चूक रहा है। वह उसे चूक रहा है जो स्वप्न देख रहा है। कि च्वांगत्सु तितली बन गया है। और वह उसे चूक रहा है जो विचार करता है कि बात बिलकुल उलटी भी हो सकती है—कि तितली सपना देख रही हो कि सह च्वांगत्सु हो गई है। यह देखने वाला कौन है? द्रष्टा कौन है। कौन है वह जो साया हुआ था और अब जागा हुआ है?
तुम मेरे लिए असत्य हो सकते हो। तुम मेरे लिए स्वप्न हो सकते हो। लेकिन
मैं अपने लिए स्वप्न नहीं हो सकता। क्योंकि स्वप्न के होने के लिए भी एक सच्चे स्वप्न देखने वाले की जरूरत है। झूठे स्वप्न के लिए भी सच्चे स्वप् नदर्शी की जरूरत है। स्वप्न भी सच्चे स्वप्नदर्शी के बिना नहीं हो सकता। तो स् वप्न को छोड़ो। यह विधि कहती है: स्वप्न को भूल जाओ। सारा जगत माया है, तुम माया नहीं हो।
तुम जगत के पीछे मत भागों। क्योंकि वहां सुनिश्चित होने की कोई संभावना नहीं

है। कि क्या सत्य है और असत्य। और अब तो वैज्ञानिक शोध से भी यह बात सिद्ध हो चुकी है।

पिछले तीन सौ वर्षों तक विज्ञान सुनिश्चित था और शंकर एक दार्शनिक, एक कवि मालूम पड़ता था। तीन सदियों तक विज्ञान असंदिग्ध था, सुनिश्चित था, लेकिन पिछले दो दशकों से विज्ञान का निश्चय अनिश्चय में बदल गया है। अब बड़े से बड़ा वैज्ञानिक कहते है कि कुछ भी निश्चित नहीं है। और पदार्थ के साथ हम कभी निश्चित नहीं हो सकते। सब कुछ पुन: संदिग्ध हो गया है। सब कुछ प्रवाहमान, बदलता हुआ मालूम पड़ता है। बाहरी रूप-रंग ही निश्चित मालूम पड़ता है। लेकिन जैसे-जैसे तुम उसमें गहरे जाते हो सब अनिश्चित होता जाता है। सब धुंधला-धुंधला होता जाता है।

शंकर कहते है—और तंत्र ने सदा कहा है—कि जगत माया है। शंकर के जन्म के पहले भी तंत्र इस विधि का उपयोग करता था जगत माया है। उसे स्वप्नवत समझो। और अगर तुमने इसे माया समझा—और यदि तुमने जरा ध्यान दिया तो तुम जानोंगे ही कि यह माया है। तो तुम्हारी चेतना का पूरा तीन भीतर की और मुड़ जाएगा। क्योंकि सत्य को जानने की अभीप्सा प्रगाढ़ है।

अगर सारा जगत अयथार्थ है, असत्य है, तो उससे कोई आश्रय नहीं मिल सकता है। तब तुम छायाओं के पीछे भाग रहे हो। अपने समय, शक्ति और जीवन का अपव्यय कर रह हो। अब भी तर की तरफ चलो। क्योंकि एक बात तो निश्चित है कि मैं हूं। यदि सारा जगत भी माया है तो भी एक चीज निश्चित है कि कोई है जो जानता है कि यह माया है। ज्ञान भ्रांत हो सकता है, ज्ञेय भ्रांत हो सकता है, लेकिन ज्ञाता भ्रांत नहीं हो सकता। वही एक मात्र निश्चय है, एकमात्र चट्टान है, जिस पर तुम खड़े हो सकते हो।

यह विधि कहती है: ''संसार को देखो; यह स्वप्नवत है, माया है, वैसा बिलकुल नहीं है जैसा भासता है। यह बस इंद्रधनुष जैसा है। इस भाव की गहराई में उतरो और तुम अपने पर फेंक दिए जाओगे। और अपने अंतस पर आने के साथ-साथ तुम निश्चय को, सत्य को, असंदिग्ध को, परम को उपलब्ध हो जाते हो।

विज्ञान कभी परम तक नहीं पहुंच सकता, वह सदा सापेक्ष रहेगा। सिर्फ धर्म परम को उपलब्ध हो सकता है। क्योंकि धर्म स्वप्न को नहीं, स्वप्नदर्शी को खोजता है। धर्म दृश्य को नहीं, द्रष्टा को खोजता है। धर्म उसे खोजता है जो चिन्मय है।

[illegible]

[illegible] [illegible] [illegible], [illegible]-3 [illegible]—35

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]—57 ([illegible])

[illegible] [illegible] [illegible]--

‘‘[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]‘‘

जब तुम्हें कामना घेरती है, चाहे पकड़ती है, तो तुम उत्तेजित हो जाते हो, उद्वेग्न हो जाते हो। यह स्वाभाविक है। जब चाह पकड़ती है तो मन डोलने लगता है। उसकी सतह पर लहरें उठने लगती है। कामना तुम्हें खींचकर कहीं भविष्य में ले जाती है; अतीत तुम्हें कहीं भविष्य में धकाता है। तुम उद्विग्न हो जाते हो, बेचैन हो जाते हो। अब तुम चैन में न रहे। चाह बेचैनी है, रूग्णता है।

यह सूत्र कहता है: ''तीव्र कामना की मनोदशा में अनुद्विग्न रहो।''

लेकिन अनुद्विग्न कैसे रहा जाए? कामना का अर्थ ही उद्वेग है। अशांति है; फिर अनुद्विग्न कैसे रहा जाए? शांत कैसे रहा जाए? और वह भी कामना के तीव्रतम क्षणों में।

तुम्हें कुछ प्रयोगों से गुजरना होगा। तो ही तुम इस विधि का अभिप्राय समझ सकते हो। तुम क्रोध में हो; क्रोध ने

-तु